October 2021

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

आज़ाद हिन्दुस्तान की बुनियादें

"तीन शर्तें हैं जब तक यह रहेंगी हिन्दुस्तान आज़ाद रहेगा, पुरअम्न रहेगा, खुशहाल रहेगा और मुहब्बत का गहवारा रहेगा (१) सेक्यूलरिज़्म (२) नान वाइलेंस (३) डेमोक्रेसी यह तीन चीज़ें हैं जो ज़रूरी हैं देश की बचे रहने के लिए, यह रहेंगी तो देश रहेगा, स्कालर्स भी सुन लें, हिस्टोरियन भी सुन लें और सब सुन लें और दिल की दीवारों पर लिख लें कुछ भी हो जाए यह देश इन तीन चीज़ों के बिना नहीं रह सकता, एक यह कि डेमोक्रेट स्टेट हो, नान वाइलेंट हो और सेक्यूलर हो, इसलिए कि तक़दीरे इलाही ने यह फ़ैसला कर दिया है (और खुदा का फ़ैसला कोई बदल नहीं सकता) इस देश में हिन्दु भी रहेंगे और मुसलमान भी, जैनी भी रहेंगे और बौद्ध भी, सिख भी रहेंगे और ईसाई भी, अगर ऐसा न होता तो खुदा क्यों बाहर से भेजता? क्यों यह आसानी पैदा होती, यह देश इसी तरह रह सकता है कि यह देश सेक्यूलर हो।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

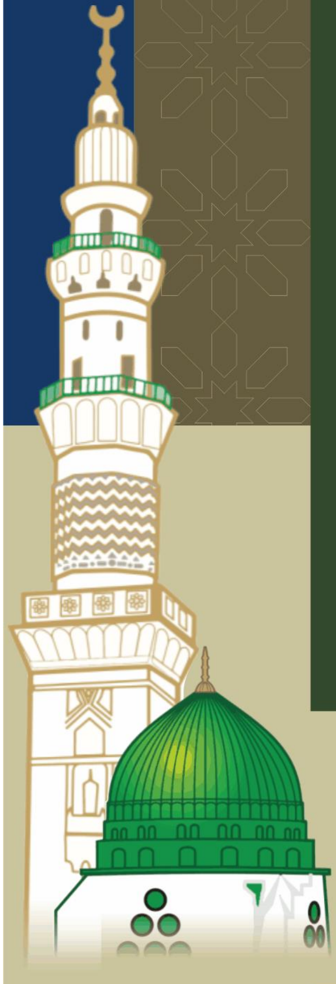

₹15/-

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी

दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

दाई, दावत और दावत का तरीक़ा

इस ज़मीन की सबसे बड़ी घमण्डी ताक़त भी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती, तो एक ताक़त है जो हमें एक पल में तबाह—बर्बाद कर सकती है। वह कौन है? वह स्वयं हम हैं और हमारी ख़ौफ़नाक ग़फ़लत है। यदि हम समय पर जाग गए तो हम पर हमारे सिवा कोई हावी नहीं हो सकता। हम ईमान तथा दृढ़ता से लैस होकर इतने ताक़तवर हैं कि दुनिया का सबसे बड़ा घमण्ड भी हमें हरा नहीं सकता लेकिन यदि हमारे अन्दर आस्था तथा कर्म से संबंधित एक छोटी सी कमज़ोरी भी पैदा होती है तो हम स्वयं ही अपने हत्यारे होंगे और हमसे बढ़कर दुनिया में अचानक मिट जाने वाली कोई चीज़ नहीं मिलेगी। हमको सरकार नहीं हरा सकती, पर हमारी ग़फ़लत हमें पीस डालेगी। हमको सेनाएं नहीं रौंद सकतीं लेकिन हमारे दिल की कमज़ोरी हमें रौंद डालेगी। हमारे दुश्मन शरीर नहीं हैं, अक़ाएद व आमाल (आस्था तथा कर्म) हैं। लेकिन अगर हमारे दिल का ईमान जाता रहा तो वह कहां मिलेगा? यदि सत्यता व त्याग का पवित्र भाव मिट गया तो वह किससे मांगा जाएगा? अगर हमने ख़ुदा का इश्क़ और मुल्क व मिल्लत का लगाव खो दिया तो वह किस कारख़ाने में ढाला जाएगा।

यदि हमारे अन्दर डर पैदा हो गया, शक—शुब्हे (भ्रम) ने जगह पा ली, ईमान की मज़बूती और हक़ का यक़ीन डगमगा गया, हम कुर्बानी से बचने लगे, हमने अपनी रूह मोह—माया के हवाले कर दी, हमारे सब्र और बर्दाश्त में कमी आ गई, हम इन्तिज़ार से थक गए, मांगने से उकता गये, हम व्यवस्थित न रहे, अपने आन्दोलन के समस्त साथियों को एक राह पर न चला सके, हम बड़ी से बड़ी कठिनाइयों और मुसीबतों में भी शांति व्यवस्था को स्थापित न रख सके, हमारी आपसी एकता के रिश्ते में कोई गांठ पड़ गई, कहने का अर्थ यह कि यदि दिल के यक़ीन और क़दम के अमल में हम पक्के और पूरे न निकले तो फिर हमारी हार, हमारी नामर्दी, हमारी तबाही, हमारे पिस जाने, हमारे समाप्त हो जाने के लिए न तो सरकार की ताक़त की ज़रूरत है, न उसके जबर व हिंसा की। हम स्वयं अपना गला काट लेंगे और फिर हमारी नामुरादी की कहानी दुनिया की सीख के लिए बाक़ी रह जाएगी। हमारी हस्ती सिर्फ़ दिल और रूह की सच्चाइयों तथा पवित्रता पर स्थापित है और वह हमें दुनिया के बाज़ारों में नहीं मिल सकती। अगर ख़ज़ाना ख़त्म हो जाए तो बटोर लिया जा सकता है। अगर फ़ौजें कट जाएं तो दोबारा बनाई जा सकती हैं। अगर हथियार छिन जाएं तो कारख़ानों में ढ़ाल लिए जा सकते हैं।

अल्लामा सैय्यद सुलेमान नदवी (रह०)

(मुक़द्दमा हज़रत मौलाना मुहम्मद इलियास (रह०) और उनकी दीनी दावत : १४—१५)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:९ अक्टूबर २०२१ ई0 वर्ष:१३

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो0 नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो0 हसन नदवी

इस अंक में:

मुल्क के इस्तहकाम की बुनियादें.............................2
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

अक़्लियती सूरत में मुसलमानों की ज़िम्मेदारियां..3
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

इन्सानी और आसमानी निज़ाम का फ़र्क़...............5
हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी

सच्चाई क्या है?...7
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ज़कात – इस्लाम का एक अहम हिस्सा................9
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

इस्लाम पर महापुरू ाों के विचार..........................14
इदारा

इतना आसां नहीं मुसलमां का मुसलमां होना.....18
मुहम्मद अरमुग़ान नदवी

इज्तिहाद के मैदान में जुमूद और लापरवाही......19
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू0पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

सम्पादकीय

मुल्क के इस्तहकाम की बुनियादें

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुल्क को आज़ाद कराने वालों और उसके अव्वलीन कायदीन ने उसकी बुनियाद तीन उसूलों पर रखी थी, धर्मनिरपेक्षता, अहिंसा और लोकतन्त्र। वह इस बात को बख़ूबी समझते थे कि यह मुख़्तलिफ़ मज़हबों और तहज़ीबों का गहवारा रहा है। मुसलमानों के सात सौ साल के शासन में भी एक मज़हब को कभी ज़बरदस्ती मुसल्लत नहीं किया गया। हर शख़्स को अपने दीन पर अमल करने की आज़ादी रही और यही वजह रही है कि मुल्क हर तरह की ख़ानाजंगियों से बचा रहा और तरक़्क़ी के रास्ते पर गामज़न रहा। अंग्रेज़ों ने जब देशा को आकर लूटा है उस वक़्त उसको सोने की चिड़िया कहा जाता था। इस चमन को सात समन्दर पार रहने वालों ने उजाड़ा, फिर अहले चमन बेदार हुए और उन्होंने इसको अंग्रेज़ो के चंगुल से आज़ाद कराया। इस आज़ादी में हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईसाई सब दोश–बदोश शरीक रहे। आज़ादी के बाद मुल्क का क़ानून आज़ादी के उसी बुनियादी नज़रिये को सामने रखकर बनाया गया जिसमें हर एक को उसका हक़ दिया गया।

इसके बाद ख़ुदगर्ज़ी का दौर शुरू हुआ, हालात बिगड़ने लगे, अपने–अपने मफ़ादात के लिए मुल्क के उसूलों को भी पसेपुश्त डाला जाने लगा। दूरियां बढ़ने लगीं और फिर मज़हबी मुनाफ़िरत ने हालात को दूसरे रुख़ पर डाल दिया।

तहरीक पयामे इन्सानियत के बानी हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह0) की दूररस निगाह देख रही थी कि मुल्क की बुनियादों को कमज़ोर करने का काम शुरू हो गया है। इसलिए मौलाना ने बार–बार यह बात कही और डंके की चोट पर कही, मुल्क से बड़े से बड़े ओहदेदारों से कही कि देश तीन बुनियादों पर खड़ा है। इनको अगर कमज़ोर किया गया तो देश ख़तरे में पड़ जाएगा। वह कहते–कहते इस दुनिया से चले गए। अफ़सोस की बात है कि बजाए मुल्क को बचाने और उसको मज़बूत करने के आज उसकी बुनियादों को खोखला किया जा रहा है। सेक्यूलरिज़्म को जिस तरह मज़हबी नफ़रत के बढ़ते रंग ने कमज़ोर कर दिया है, वह हर शख़्स जानता है। इसी तरह हिंसा के बढ़ते हुए मिज़ाज ने आपसी मुहब्बत व भाईचारे की फ़िज़ा को जिस तरह ख़राब कर दिया है, इससे एक शख़्स अपने घर में भी महफ़ूज़ नज़र नहीं आता। ज़िन्दगी का मज़ा मुहब्बत व आशती में है और यही चीज़ ख़त्म होती जा रही है। इसी तरह लोकतन्त्र का जिस तरह गला घोंटा जा रहा है, वह भी दुनिया के सबसे बड़े लोकतन्त्र के माथे पर कलंक का टीका है। साफ़ लगता है कि कश्ती भंवर में है और मल्लाह बेख़बर हैं। इस वक़्त ज़रूरत इस बात की है जिससे जो बन पड़े वह देश को बचाने के लिए कर गुज़रे। इसके सेक्यूलरिज़्म के ढांचे को मज़बूत करके अहिंसा का मिज़ाज बनाया जाए और इंसानियत की दुहाई दी जाए। हर इन्सान के दिल में इन्सानियत की चिंगारी मौजूद है, इसको जलाने की ज़रूरत है। मुहब्बत व हमदर्दी की फ़िज़ा बनायी जाए और लोगों के दिमाग़ों में जो ज़हर घोला जा रहा है उसको साफ़ करने की कोशिश की जाए ताकि अमन व अमान और भाई चारे का माहौल पैदा हो। इसी तरह इसकी साफ़–सुथरी जो छवि रही है उसको बहाल करने की हर मुमकिन कोशिश की जाए। घर–घर मुहब्बत व इन्सानियत की बात पहुंचायी जाए और अपील की जाए कि हर शख़्स देश के लिए अपनी सलाहियतों का इस्तेमाल करे, एक–दूसरे को कमज़ोर करने के लिए अगर सलाहियतों का इस्तेमाल होगा तो इससे मुल्क का नुक़सान है। इसलिए तीनों बुनियादी पिलर्स को मज़बूत किया जाए और इसके लिए हर मुमकिन उपाय किया जाए।

यह तीनों वह बुनियादें हैं कि अगर यह मज़बूत होंगी तो देश मज़बूत होगा और तरक़्क़ी करेगा, वरना देश का ख़ुदा ही हाफ़िज़ है।

अल्पसंख्यक रूप में मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

एक ऐसे मुल्क में जिसमें इस्लाम एक महकूमाना मज़हब की हैसियत रखता हो और मग़्रिबी इक़दार और ग़ैर इस्लामी तर्ज़े मुआशरत की बालादस्ती हो और जिसमें जाति मुनाफ़े और सियासी व जमाअती फ़ायदों ही को सबकुछ समझा जाता हो और लज़्ज़त को एक फ़लसफ़े की शक्ल दे दी गई हो, जिसमें तमामतर आमाल व अख़लाक़ और कोशिशों का महवर इसी को समझा जाने लगा हो। ऐसे मुल्क में मुसलमानों की (जबकि वह वहां अक़्लियत में हों) बहुत ही नाज़ुक ज़िम्मेदारी है। इसके लिए ज़रूरी है कि इनमें ग़ैर मुतज़लज़ल ईमान हो। जुर्रतमंदाना किरदार हो। वह पूरी हिकमते अमली से काम लें, फिर इनमें उस पैग़ामे दावत पर पूरा एतमाद हो जिससे अल्लाह ने इनको मुशरर्फ़ फ़रमाया है। यह भी इनके लिए ज़रूरी है कि इनका एक बुलन्द मेयार हो और वह एहसासे कमतरी का शिकार न होने पाएं। अगर वह इस बुलन्द मेयार पर न हुए तो वह अपनी ज़ात को और अपनी क़ौम को हिक़ारत की निगाह से देखेंगे। इस सूरत में वह कोई मुअस्सिर और अहम किरदार अदा नहीं कर सकते जो लोगों कि तवज्जो को मरकूज़ कर सके और कुछ तब्दीली अमल में ला सके।

मैं आपके सामने एक वाक़्या बयान करता हूं, जिससे आपके सामने बात बिल्कुल साफ़ हो जाएगी और एक ऐसे ग़ैरतमन्द मुसलमान का किरदार भी आपके सामने आएगा जिसको अपनी दावत व पैग़ाम पर पूरा एतमाद था और यह ज़ाहिरी शान व शौकत और दिलफ़रेब मंज़र उसकी नज़र में ठीकरों से ज़्यादा हैसियत न रखते थे और ज़ाहिरी ऐश व इशरत पर जीने—मरने वालों और जाहिली ज़िन्दगी गुज़ारने वालों पर उसको तरस आता था, यह तारीख़े इस्लाम के अव्वल ज़माने का वाक़्या है।

ईरानी फ़ौज का सबसे बड़ा क़ाएद जिसको रुस्तम के नाम से याद किया जाता है और जिसको अपने दबदबे और शान व शौकत में शहंशाहे ईरान के क़रीब ही समझा जाता था, उसने लश्करे इस्लाम के क़ाएद हज़रत साद बिन अबी वक्कास (रज़ि0) को पैग़ाम भेजा कि किसी ऐसे आदमी को भेज दिया जाए जो उस मक़सद की वज़ाहत करे जो अरब के सेहरानशीनों और बद्दुओं को उन मुतमद्दिन मुल्कों तक ले आया तो तहज़ीब व तमद्दुन और अस्करी ताक़त में अपने चरम पर हैं और अरब मुल्क को उनसे कोई निस्बत नहीं। अब ग़ौर कीजिए कि वह आदमी जो तख़्ते सयादत व क़यादत पर बैठा हुआ है और एक बड़े रक़्बे पर उसकी हुकूमत है, उसका अरबों के बारे में क्या तास्सुर होगा जो ख़ेमों और कच्चे मकानों में रहते थे और जिनका गुज़ारा खजूर और ऊंट के गोश्त पर था, वह किसी लापरवाही और हिक़ारत की निगाह से अरबों की तरफ़ देखता होगा, उसने कहलवाया कि कोई ऐसा आदमी भेज दिया जाए जो इस मक़सद व मुहर्रिकात की तरजुमानी कर दे जो उनको यहां लाएं हैं।

यह इस्लाम का मोजज़ा है उसने तमाम अरबों को फ़िक्र, अक़ीदा व अल्लाह पर ईमान और इस्लाम के मक़सद पर फ़ख़्र व नाज़ के एक बुलन्द मेयार पर पहुंचा दिया था। हज़रत साद बिन अबी वक्कास (रज़ि0) ने हज़रत रबई बिन आमिर (रज़ि0) को चुना, यह हज़रत रबई जिनसे अक्सर उल्माए तारीख अनजान हैं, उनको लश्करे इस्लामी में कोई इम्तियाज़ी शान भी न हासिल थी, मैं आपके सामने यह क़िस्सा कोई अफ़साने के तौर पर नहीं बयान कर रहा हूं जिसमें सिर्फ़ वक़्ती मज़ा है या क़ौमी फ़ख़्र व इज़्ज़त का सामान है, मैं इसलिए आपके सामने इस क़िस्से का ज़िक्र कर रहा हूं ताकि आप उस ताक़तवर ईमान व एतमाद का जिसने ईरानी लश्करों के क़ाएदे आम रुस्तम इस जुर्रतमन्दाना और आज़ादाना बातचीत पर आमादा किया था, कुछ अंदाज़ा कर सकें और मोमिन के किरदार, जुर्रात व अज़्म और ईमानी ताक़त का, मग़्रिबी तहज़ीब व तरक़्क़ी, इक़्तिदार व ग़ल्बे के बारे में अपने मौक़िफ़ व किरदार से मुआज़्ना कर सकें। यहां हमारा अपनेआप के साथ, अपने पैग़ाम के साथ और अपनी ज़िम्मेदारियों के साथ क्या मामला है और मग़्रिबी तहज़ीब

जो यहां राएज है और जिसको उस वक़्त मुआसिर दुनिया में सियादत व क़यादत का मक़ाम हासिल है उसकी तरफ़ हम किस निगाह से देखते हैं।

हज़रज रबई बिन आमिर (रज़ि0) रुस्तम के दरबार में तशरीफ़ लाए, उनके लिबास में पेबन्द लगे हुए थे, मामूली सी तलवार और ढाल उनके साथ थी, एक मामूली और छोटे क़द के घोड़े पर सवार थे, इसी हाल में क़ालीनों को रौंदते हुए तशरीफ़ लाए, फिर घोड़े से उतरे, वहीं किसी तकिया से उसको बांध दिया और रुस्तक की तरफ़ बढ़ने लगे, हथियार उनके साथ थे, ज़िरह पहने हुए थे और सर पर ख़ूद था। वहां के लोगों को इस पर एतराज़ हुआ और कहने लगे कि हथियार उतार दो, हज़रत रबई बिन आमिर ने फ़रमायाः मैं ख़ुद तुम्हारे पास नहीं आया, तुम्हारी दावत पर आया हूं, अगर इसी हाल में जाने देते हो तो ठीक है, वरना मैं वापस जाता हूं, रुस्तम ने कहा आने दो, हज़रत रबई बिन आमिर (रज़ि0) अपने नेज़े को उन रेशमी क़ालीनों पर टेकते हुए आगे बढ़े यहां तक कि उनमें अक्सर क़ालीन फट गए।

रबई (रज़ि0) रुस्तम के पास पहुंचे, रुस्तम ने पूछा कि अरब किस मक़सद से यहां आए है? रबई ने ईमान व यक़ीन के साथ जो उनके रेशे–रेशे में घुस चुका था और भरपूर एतमाद के साथ जिसने उनके एअसाब को मज़बूत बना दिया था, इसलिए कि उनके पीछे जो चीज़ काम कर रही थी वह आसमानी किताब थी, सच्ची नुबूव्वत थी, न डिगने वाला ईमान और पुख़्ता अक़ीदा था, बुलन्द हिम्मत थी और तीर बहदफ़ निगाह थी, उन्होंने फ़रमायाः हमको अल्लाह ने इसलिए भेजा है ताकि हम उन लोगों को जिनको अल्लाह चाहे बन्दों की ग़ुलामी से निकालकर ख़ुदाए वाहिद की ग़ुलामी में ले आएं, दुनिया की तंगी से निकालकर दुनिया की वुसअत में ले आएं और मज़हब के जोर व सितम से निकालकर इस्लाम का अद्ल व इंसाफ़ अता करें।

बुज़ुर्गो! इस्लाम के पैग़ाम व दावत और उसके बुनियाद व मक़सद के बारे में हज़रत रबई (रज़ि0) ने जो फ़रमाया, उस पर कामिल यक़ीन के साथ और जो उन्होंने लोगों को अल्लाह की बन्दगी की तरफ़ लाने और दूसरे मज़हबों के जोर व सितम से निकालकर इस्लाम के अद्ल व इंसाफ़ की राह दिखाने का ज़िक्र फ़रमाया, उस पर कोई हैरत व ताज्जुब नहीं होता कि यह उनके अक़ीदे और यक़ीन की बात थी, लेकिन मुझे उनके इस जुम्ले पर बड़ी हैरत व ताज्जुब है जिसमें उन्होंने फ़रमाया कि हमें इसलिए भेजा गया है कि ''दुनिया की तंगी से निकालकर दुनिया की वुसअत की तरफ़ लाएं'' अगर वह दुनिया की तंगी से निकालकर आख़िरत की वुसअत में लाने का ज़िक्र फ़रमाते तो मुझे ज़रा सा भी ताज्जुब न होता, इसलिए कि यह तो ऐसी हक़ीक़त है जिस पर हर मुसलमान और ईमान वाला यक़ीन रखता है और हज़रत रबई का वाक़्या तो अव्वल ज़माने का है, मैं उनके इस जुम्ले पर हैरतज़दा हो जाता हूं कि हम तुमको दुनिया की तंगी से निकालकर दुनिया की वुसअतों में लाना चाहते हैं, मानो वह कह रहें हों कि हमने अपने ऊपर तरस खाकर और उन मुल्कों के ऐश व इशरत की चाह में अपने वतन को तर्क नहीं किया, हम तो यहां पर तरस खाकर आए हैं, हम चाहते हैं कि तुमको तंग व तारीक क़ैदख़ाने से आज़ाद करें, जिसमें तुम इस परिन्दे की तरह ज़िन्दगी गुज़ार रहे हो जिसको किसी क़ैद में बन्द कर दिया जाता है और दाना और पानी उसी के अन्दर दे दिया जाता है, इसलिए कि तुम अपनी आदतों और ज़रूरतों के ग़ुलाम हो, नफ़्स की ख़्वाहिशों के ग़ुलाम हो।

भाइयों! मैं आपसे कहता हूं कि आप यहां आज़ादाना, मुअस्सिर और बुनियादी किरदार अदा करें, आपकी ज़िन्दगी मिसाली हो, जो लोगों की निगाहें फेर दे और तवज्जे मरकूज़ कर दे, ज़हनों में ऐसे सवालात पैदा हों जो मुआज़ना करने पर मजबूर कर दें और इस्लाम के बारे में सही मालूमात हासिल करने का दाइया पैदा हो, अगर आपने भी ज़िन्दगी जीने का मग़रिबी तरीक़ा अपना लिया, आप उन्हीं के पैरोकार बन गए और अपने बुलन्द मेयार से अपने को नीचे गिरा लिया तो आप में और मग़रिबी लोगों में कोई फ़र्क़ बाक़ी नहीं रह सकता है और न उनमें मालूमात का शौक़ और ग़ौर व फ़िक्र का जज़्बा पैदा हो सकता है और न आपका एहतिराम उनके दिल में आ सकता है, अगरचे वह आपको क़ाबिले तक़लीद नमूना समझें, लेकिन जब आप उनके सामने एक नामानूस तरीक़ा–ए–ज़िन्दगी पेश करेंगे तो उनके अन्दर एक जुस्तुजू पैदा होगी और वह आपसे पूछने पर मजबूर होंगे कि ज़िन्दगी जीने का यह तरीक़ा आपने कहां से लिया और यह बुलन्द व बाला अक़दार व अख़लाक़ आपने किससे सीखे? उनमें शौक़ पैदा होगा।

इन्सानी और आसमानी निज़ाम का फ़र्क़

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

दुनिया का रिवाज और इन्सानी मामूल यह है कि वह कायनात के निज़ाम को इज्तिमाई ज़िन्दगी के हाल पर क़यास करता है, यानि जिस तरह दुनिया में यह होता है कि किसी निज़ाम को बनाने के मुताल्लिक़ प्लानिंग की जाती है और प्लानिंग करने के बाद उस काम को करने वालों के सुपुर्द कर दिया जाता है कि तुम इस प्लानिंग कें मुताबिक़ काम करो और निज़ाम बनाने वाला इन्सान ख़ुद फ़ारिग़ हो जाता है, ठीक उसी तरह इन्सान यह समझता है कि अल्लाह तआला ने सबको पैदा किया और सारा निज़ाम बनाकर दूसरों के ज़िम्मे कर दिया, लिहाज़ा अब फ़लां माबूद हमारी ज़रूरत पूरी करेगा, फ़लां माबूद हमारी मुसीबत हटा देगा, और फ़लां माबूद हमें फ़ायदा पहुंचा देगा। मानो यह सब इन्सानों ने अपने तौर पर तय कर लिया है, यही वजह है कि अल्लाह तआला को इंसान याद भी नहीं रखता, बल्कि वह इसी ख़्याल में भटका रहता है कि जिस तरह दुनिया में एक छोटे अफ़सर से काम चल रहा है तो बड़े अफ़सर के पास जाने की ज़रूरत ही नहीं है। इसी तरह जब अल्लाह तआला ने अपने छोटे–छोटे अफ़सर बना दिये हैं जो इंसानों के कामों को अंजाम देंगे और और नऊज़बिल्लाह ख़ुद अल्लाह तआला फ़ारिग़ हो गया है तो हम उसके पास क्यों जाएं? अल्लाह तआला फ़रमाता है कि तुम अल्लाह तआला को छोड़कर जिनको अपना कारसाज़ समझते हो कि वह तुम्हारी ज़रूरतें पूरी कर देंगे और अगर अल्लाह तआला को तुम यह समझकर छोड़ देते हो कि अल्लाह तआला ने यक़ीनन सारा आलम बनाया है, मगर उसने बनाने के बाद दूसरों के सुपुर्द कर दिया है, तो यह एक धोखा है और बहुत ही सतही बात है।

अल्लाह तआला के बनाए हुए निज़ाम की खुसूसियत यह है कि इसने पूरा निज़ाम बनाकर हर चीज़ अपने ही हाथ में रखी है और बीच में वास्ते नहीं रखे हैं, यहां तक कि अम्बिया भी वास्ता नहीं हैं। जबकि इन्सानों में सबसे बड़ी शख़्सियत और सबसे बड़ा मक़ाम अम्बिया का है, मगर अम्बिया भी बीच में वास्ता नहीं है, दुआ मांगने के बारे में अल्लाह ने कहा कि हमसे बराहरास्त दुआ मांगो, हमसे सीधा ताल्लुक़ रखो, बीच में वास्तों की कोई ज़रूरत नहीं है:

"और जब आपसे मेरे बन्दे मेरे बारे में पूछें तो मैं तो क़रीब ही हूं हर पुकारने वाले की पुकार मैं सुनता हूं जब वह मुझे पुकारता है, तो उनको भी चाहिए कि वह मेरी बात मानें और मुझ पर यक़ीन रखें ताकि वह सआदत से हमकिनार हों।" (सूरह बक़राः 186)

जो लोग शिर्क में पड़ते हैं, या जो लोग बिदअत में पड़ते हैं, वह उसी ग़लती का शिकार हो जाते हैं कि बीच में वास्ते बना लेते हैं और फ़लां शख़्स बुज़ुर्ग हो गया तो मानो अल्लाह तआला का पसंदीदा हो गया, लिहाज़ा अब वह अल्लाह की तरफ़ से जो चाहे करे, अल्लाह तआला उसकी रिआयत करेगा, अगर वह चाहे तो किसी को फ़ायदा पहुंचा सकता है और अगर वह चाहे तो किसी को नुक़सान भी पहुंचा सकता है, मानों ज़हनों में यह बात बैठ जाती है कि उस शख़्स में एक तरीक़े से अल्लाह तआला वाली क़ूव्वत आ गयी है, इसीलिए क़ब्रों पर जाते हैं और समझते हैं कि क़ब्र में बुज़ुर्ग हैं तो मानो उसको अल्लाह तआला की तरफ़ से अख़्तियार हासिल है कि वह लोगों की तकलीफ़ें दूर कर सकता है और फ़ायदा पहुंचा सकता है। इन्सानी दिलों में यह बात बहुत जल्द बैठ जाती है और फिर यह बात शिर्क तक पहुंच जाती है, इन्सान की कमज़ोरी यह है कि उसके ज़हन में ऐसी बातें बहुत जल्द आ जाती हैं। इसकी बुनियादी वजह यही है कि इन्सानी निज़ाम में प्लानिंग करने वाले अफ़सरे आला

या दूसरे लोग होते हैं, खुद बादशाह कुछ नहीं करता, बस उसका हुक्म और पॉलिसी चलती है, बाक़ी काम वज़ीर करते हैं और उसके नीचे सेक्रेटरी करते हैं, इसीलिए जिसको अपना काम करवाने की ज़रूरत होती है तो वह सोचता है कि हमें बादशाह के पास जाने की क्या ज़रूरत है, बल्कि जो शख़्स इस काम पर मामूर है और जो उसका सेक्रेटरी है, उसको राज़ी कर लेते हैं और खुश कर लेते हैं तो काम हो जाएगा, मानो सिर्फ़ उसको राज़ी करने की ज़रूरत है, न कि बादशाह को राज़ी करने की। दुनिया के इसी निज़ाम को इन्सान अल्लाह तआला के निज़ाम पर क़यास कर बैठता है और नतीजा यह होता है कि वह शिर्क तक पहुंच जाता है।

इन्सान शुरूआत में छिपे हुए शिर्क में मुब्तिला होता है, अल्लाह हिफ़ाज़त फ़रमाए इसमें बहुत से लोग मुब्तिला होते हैं और उसकी वजह यह है कि वह असबाब व वसाएल को मुत्सर्रिफ़ मान लेते हैं कि उन्हीं से सारा काम चलता है, यहां तक कि हदीस शरीफ़ में आता है: "जिस शख़्स ने यह कहा कि हम पर अल्लाह के फ़ज़्ल व रहमत से बारिश हुई है तो वह मेरे ऊपर ईमान रखने वाला और सितारों का इन्कार करने वाला है।" (सही बुख़ारी: 846)

हदीस की रौ से यहां तक कहना मना है कि बारिश मौसम की बुनियाद पर हुई है। बल्कि वाक़्या यह है कि बारिश अल्लाह तआला महज़ अपने फ़ज़्ल व करम से नाज़िल करता है, लेकिन नुजूमी कहते हैं कि फ़लां सितारा निकलेगा तो ऐसा होगा, मानो वह सितारों को अस्ल और मुतसर्रिफ़ समझते हैं, जबकि दूसरी चीज़ों को मुतसर्रिफ़ समझ लेना ही शिर्क तक पहुंचाता है।

अल्लाह तआला ने इन्सान को ज़िम्मेदारी देने के लिए पैदा किया था, क्योंकि अल्लाह तआला सही तरीक़े पर ज़िम्मेदारी अंजाम देने के नतीजे में जन्नत का मक़ाम देना चाहता था और ज़ाहिर है जो लोग इस ज़िम्मेदारी को अमानतदारी के साथ पूरा कर रहे हैं उनको इंशाअल्लाह जन्नत क ामक़ाम मिलेगा, लेकिन जो लोग इस सिलसिले में ज़्यादा ग़ौर नहीं करते और अपनी अक़्ल से काम नहीं लेते, उनके पास कान तो हैं मगर वह ज़िम्मेदारी अंजाम देने में हक़ बात नहीं सुनते और उनके पास दिल तो हैं मगर वह हक़ बात क़ुबूल नहीं करते और न ही हक़ीक़त तक रसाई की कोशिश करते हैं, बल्कि वह वसाएल पर एतमाद रखते हैं और समझते हैं कि यही कारसाज़े हक़ीक़ी है, उनके बग़ैर कोई काम नहीं होगा और जब यह बात सामने आती है कि हर चीज़ अल्लाह तआला से मांगी जाए तो कहते हैं: हम उससे बराहेरास्त कहां कुछ कह सकते हैं, वह तो बुलन्दी पर है, हम उस तक पहुंच ही नहीं सकते, जबकि अल्लाह तआला ने साफ़–साफ़ यह बात कही है कि हमसे सीधा ताल्लुक़ रखो और वसाएल को अस्ल मत समझो, इसके बाद आदमी को कुछ और सोचने की ज़रूरत ही नहीं रह जाती, बल्कि हर लम्हा अल्लाह को मानना चाहिए और हर चीज़ उससे मांगना चाहिए, अल्लाह तआला कहता है:

"और हमने दोज़ख़ के लिए बहुत से जिन्नात और इन्सान पैदा किए हैं, उनके दिल हैं जिनसे वह समझते नहीं और उनकी आंखें हैं जिनसे वह देखते नहीं और उनके कान हैं जिनसे वह सुनते नहीं, वह तो जानवरों की तरह हैं बल्कि उनसे गए गुज़रे हैं, वही लोग ग़ाफ़िल हैं और अल्लाह के अच्छे–अच्छे नाम हैं तो उन्हीं से उसको पुकारो और जो उसके नामों में कजी अख़्तियार करते हैं उनको छोड़ दो जो वह कर रहे हैं उसकी सज़ा उनको जल्द ही मिल जाएगी।"

अल्लाह तआला फ़रमाता है कि जिनको तुमने अपना माबूद समझ रखा है, उनसे तुम अपनी मुसीबतों को टालना चाहते हो और उनसे फ़ायदा उठाना चाहते हो, यह वह हैं जिनकी कोई हैसियत नहीं, जब हम दुनिया बना रहे थे और यह पूरा आलम बना रहे थे तो क्या उस वक़्त यह मौजूद थे? क्या उस वक़्त हमारे साथ शरीक थे? क्या यह चीज़ों को जानते थे? यह तो वहां मौजूद भी नहीं थे। अब हम निज़ाम चलाने में उनसे क्या मदद लेंगे? हम उनको अपना वास्ता बनाएंगे? क्या हमें इसकी ज़रूरत है कि हम अपना काम उनके सुपुर्द करें? हमें इसकी हरगिज़ कोई ज़रूरत नहीं।

सच्चाई क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हज़रत अबूसुफ़ियान (रज़ि0) से रिवायत है कि वह अपनी लम्बी हदीस में हर कुल की हिकायत बयान करते हैं, हरकुल ने कहाः तुमको किस बात का हुक्म देते हैं (यानि नबी करीम स0अ0व0) अबुसुफ़ियान कहते हैं, मैंने कहाः हुक्म देते हैं कि अल्लाह तआला की इबादत करो और उसके साथ किसी को शरीक न करो और जो तुम्हारे बाप–दादा कहते हैं उसको छोड़ दो और नमाज़, सच्चाई, सिलारहमी, सदक़ा और पाकदामनी का हुक्म देते हैं। (सही बुख़ारी : 7)

हज़रत अबूसुफ़ियान (रज़ि0) जब रोम तिजारत के लिए गए थे, तब यह वाक़्या उनके साथ पेश आया? यह ज़माना उनके शिर्क का था, वह उस वक़्त तक मुसलमान नहीं हुए थे और यही वह ज़माना था जब अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) ने दुनिया के बादशाहों के नाम दावत के ख़त दिये थे। उन्हीं बादशाहों में एक भी है, उसको भी रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने ख़त भेजा था, हरकुल का दिल नर्म था और क़रीब था कि वह हक़ की दावत कुबूल कर ले, लेकिन सल्तनत की ख़्वाहिश और दुनिया की मुहब्बत ऐसी होती है कि बड़ी–बड़ी सआदतों से बाज़ मर्तबा महरूम कर देती है, हरकुल को भी यही डर हुआ कि उसकी सल्तनत चली जाएगी, इसलिए कि सब लोग इस्लाम के मुख़ालिफ़ हैं, इसीलिए इसको इस्लाम की तौफ़ीक़ नहीं मिली, अलबत्ता उसने नर्मी ज़रूर अख़्तियार की, लिहाज़ा जब उसको रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का ख़त मिला तो उसने तहक़ीक़ की कि क्या मक्का मुकर्रमा के कुछ लोग यहां मौजूद हैं? इत्तिफ़ाक़ से वहां अबूसुफ़ियान मौजूद थे और वह कुरैश के सरदारों में से थे, चुनान्चे उसने अबूसुफ़ियान को बुलाया और उनसे तहक़ीक़ की और चन्द सवालात किये, अबूसुफ़ियान ख़ुद कहते हैं कि हरकुल ने मुझसे जो सवालात किये, उस वक़्त मेरे साथ कुछ लोग भी वहां मौजूद थे, मेरा जी तो चाहता था कि मैं कुछ इधर–उधर की बात कह दूं, लेकिन मैं जानता था कि मुझे झुठला दिया जाएगा, दूसरी एक बात यह भी है कि ज़माना जाहिलियत के अंदर अरबों में हज़ार ख़राबियां थीं लेकिन झूठ नहीं था, वह झूठ बहुत कम बोलते थे और झूठ को बहुत ही बुरा समझते थे, उनके यहां झूठ या निफ़ाक़ नहीं था, जो उनके अन्दर था वही बाहर था, दुश्मनी होती तो आख़िरी हद तक दुश्मनी होती और दोस्ती होती तो आख़िरी हद तक दोस्ती होती।

क़िज़्ब बयानी की कोशिशः

हरकुल ने अबूसुफ़ियान से जो सवालात किये, अबूसुफ़ियान ने उनक जवाब ठीक–ठीक दिये, लेकिन उन्होंने ऐसे अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करने की कोशिश की जिनसे हरकुल को कुछ तकद्दुर पैदा हो जाए, मगर वह समझदार था और उसने पूरी बात समझ ली, फिर आख़िर में उसने एक जुम्ला कहा कि अगर तुम जो कह रहे हो सच कह रहे हो तो एक दिन वह आने वाला है कि जिस जगह मैं बैठता हूं, वह इस जगह के भी मालिक होंगे और उसने रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के बारे में एहतिराम के कलिमात कहे, लेकिन जो बड़े–बड़े पादरी वहां बैठे थे, जब उसने उनके चेहरे पर उतार–चढ़ाव देखा तो मशविरा किया और मशविरा में यह बात और ज़्यादा खुलकर सामने आ गयी कि वह इस्लाम के मुख़ालिफ़ हैं, लेकिन वह समझ गया कि अगर मैंने इस्लाम कुबूल कर लिया तो मेरी सल्तनत चली जाएगी, फिर लोग मुझे कुबूल नहीं करेंगे, इसीलिए उसने बात बनाई और कहने लगा कि मैं तो तुम्हारे मज़हब का इम्तिहान ले रहा था कि तुम ईसाईयत पर कितनी मज़बूती से क़ायम हो?

हरकुल ने अबूसुफ़ियान से जो सवालात किये, उनमें से एक सवाल यह भी था कि तुम्हारे नबी तुम्हें किस

चीज़ का हुक्म देते हैं, यानि उनकी दावत क्या है? अबूसुफ़ियान कहते हैं: मैंने कहा: वह यह फ़रमाते हैं कि एक ही अल्लाह की इबादत करो और उसके साथ कुछ भी शरीक मत करो और तुम्हारे बाप–दादा जो भी कहते चले आए हैं सब छोड़ दो।

इस जवाब में अबूसुफ़ियान ने एक ऐसा जुम्ला कहा जो आदमी के दिल में थोड़ा सा चुभता है, यानि ''बाप–दादा जो कहते चले आए हैं'' ''बाप–दादा जो करते चले आए हैं'' यह वह बातें होती हैं जिनको छोड़ना बड़ा मुश्किल होता है, इसीलिए उन्होंने यह जुम्ला ख़ास तौर से इस्तेमाल किया, ताकि हरकुल को ज़रा सा यह ख़्याल पैदा हो कि यह नबी एक नई बात लेकर आए हैं और जो पहले से होता चला आ रहा है उसमें हर चीज़ की नफ़ी करते हैं, लेकिन यह बात एक हक़ीक़त थी, कुरआन मजीद में कई जगह यह बात कही गयी है कि मुश्रिकीन कहते हैं कि हमने अपने दादा को जिस पर पाया है उससे हम नहीं हट सकते।

इन्सानी मिज़ाजः

आदमी का यह आम मिज़ाज होता है कि वह आदत को आसानी से नहीं छोड़ता और अगर उसको समाज को छोड़ना पड़े, घर–बार को छोड़ना पड़े, बाप–दादा की रीति–रिवाज को छोड़ना पड़े, तो यह बहुत मुश्किल काम होता है, लेकिन हक़ तलाश करना है और हक़ तक पहुंचना है, तो हक़ तक पहुंचने के लिए यह सारी चीज़ें रुकावट नहीं होनी चाहिएं, रुकावट बनने वाली चीज़ें छोटी भी होती हैं और बड़ी भी होती हैं, बड़ी बातें जैसे कहीं किसी के यहां बाप–दादा शिर्क करते चले आ रहे हैं तो वहां शिर्क हो रहा है, ज़ाहिर है उसको छोड़ना मुश्किल होता है, लेकिन अगर कोई हक़ की तलाश में है तो उसको सोचना पड़ेगा, इसी तरह कभी छोटी बातें होती हैं, जैसे: हमारे बाप–दादा ठीक थे, ईमान पर थे और तौहीद पर थे, लेकिन उनके यहां बाज़ रस्में थीं, बाज़ बिदअतें थीं, जो होती चली आ रही थीं, उनका भी छोड़ना बड़ा मुश्किल होता है, लेकिन अगर आदमी हक़ पर आना चाहता है तो उसको यह नहीं देखना चाहिए कि हमारे यहां क्या होता चला आ रहा है, बल्कि उसको यह देखना चाहिए कि अल्लाह के रसूल (स०अ०व०) ने क्या फ़रमाया है?

गरज़ कि अबूसुफ़ियान ने हरकुल के सवाल का जवाब देते हुए कहा कि वह एक अल्लाह की बन्दगी का हुक्म देते हैं कि शिर्क न करो और बाप–दादा जो कहते चले आए हैं उसको छोड़ दो, इसी तरह रसूलुल्लाह (स०अ०व०) नमाज़ का हुक्म देते हैं, सच्चाई का, सदक़े का, पाक दामनी का और सिला रहमी का भी हुक्म देते हैं, इस जवाब के बीच में उन्होंने एक बात ऐसी भी कह दी जिससे मानो एक हल्की सी ठोकर लगे और हरकुल यह सोचे के अच्छा! बाप–दादा जो कहते चले आ रहे हैं उसको छोड़ना पड़ता है, लेकिन वह समझदार था, इसलिए फ़ौरन बात को समझ गया।

हरकुल की गवाहीः

अबूसुफ़ियान ने जो बातें बयान कीं, यह उस वक़्त की हैं जब मक्की दौर था। यह मक्की ज़िन्दगी की बुनियादी तालीमात थीं, रसूलुल्लाह (स०अ०व०) वहां पर उन्हीं बातों का हुक्म देते थे, अबूसुफ़ियान ने यह सारी बातें हरकुल के सामने रखीं, ज़ाहिर है यह वह बुनियादी सिफ़ात हैं कि अम्बिया (अलैहिस्सलाम) उनकी दावत देते चले आ रहे हैं। हरकुल ईसाई था और उसके पास मज़हबी तालीमात थीं, वह समझदार था लिहाज़ा समझ गया कि यह नबी बरहक़ नबी हैं और हज़रत ईसा (अलैहिस्सलाम) ने जिनके बारे में पेशीनगोई फ़रमाई थी यह वही नबी हैं, इसीलिए उसने कहा:

''अगर तुम यह बात सच कहते हो तो एक दिन ऐसा ज़रूर आएगा कि मैं जहां बैठा हूं वह इस जगह के भी मालिक होंगे।''

तौफ़ीक़–ए–इलाहीः

ईमान की तौफ़ीक़ अल्लाह के हाथ में है, वह जिसको चाहे ईमान की तौफ़ीक़ दे, इस सिलसिले में सिर्फ़ हक़ बात को समझ लेना या किसी दर्जे में यक़ीन का आ जाना भी काफ़ी नहीं है, जब तक कि अल्लाह तआला की तरफ़ से यह तौफ़ीक़ न हो कि आदमी उसका इक़रार कर ले और उसको मान ले, यहूदियों का हाल यह था कि:

"जिनको हमने किताब दी है वह आपको उसी तरह पहचानते हैं, जिस तरह अपने बेटों को पहचानते हैं।" (सूरह बक़रा: 146) ... (शेष पेज 13 पर)

ज़कात - इस्लाम का एक अहम हिस्सा

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

ज़कात इस्लाम का एक ज़रूरी हिस्सा है। कुरआन पाक में जगह–जगह नमाज़ के साथ ज़कात देने पर भी ज़ोर दिया गया है। "आप (स0अ0व0) ने इसे इस्लाम के पांच बुनियादी हिस्सों में से एक बताया है।"

एक हदीस में ये भी इरशाद फ़रमायाः "मुझे हुक्म दिया गया कि लोगों से क़िताल करूं ताकि वो कलिमा शहादत अदा करें, और ज़कात दें।" (बुख़ारीः 1399)

ज़कात अदा करने से माल बढ़ता है

ज़कात अदा करने में एक बड़ा बल्कि बुनियादी कारण ये माना जाता है कि इससे माल की एक बड़ी मात्रा हाथ से निकल जायेगी और उसके बदले में कोई चीज़ नहीं मिलेगी। लेकिन कुरआन मजीद में इस ख़्याल की काट की गयी है और इसका पूरा इत्मिनान दिलाया गया है कि अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने से घटता नहीं है, बल्कि इसमें बढ़ोत्तरी होती है।

एक दूसरी जगह माल ख़र्च करने से जो बेपनाह बरकत व इज़ाफ़ा होता है उसको कुरआन में एक मिसाल देकर समझाया गया है। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने वाले की मिसाल उस बीज की तरह है जिसको जब ज़मीन में डाला जाता है तो ज़ाहिरी आंख ख़ाक में मिलकर ज़ाया होते उसे देखती है, लेकिन फिर होता क्या है? अल्लाह तआला उस दाने से पौधा निकालता है, जिसमें सात बालियां निकलती हैं, और हर बाली में सौ दाने होते हैं, इसी तरह हर दाने से सौ दाने हासिल होते हैं।" (सूरह बक़रह : 261)

यही मामला अल्ला की राह में ख़र्च करने वालों के साथ होता है कि ज़ाहिरी तौर पर लगता है कि अपना माल ख़राब कर दिया लेकिन अल्लाह तआला दुनिया में भी उस पर बरकतों के दरवाज़े खोल देते हैं, और आख़िरत में भी इंशाअल्लाह उसको कई गुना अज्र व सवाब मिलेगा।

आख़िरत का अज्र व सवाब

सहबे निसाब होने के बावजूद ज़कात न अदा करने वालों को कुरआन पाक में जो सख़्त तरीन वईद सुनाई गयी है उससे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "जो लोग अपने पास सोना–चांदी जमा करते हैं और उसको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते तो (ऐ नबी स0अ0) आप उनको दर्दनाक अज़ाब की ख़ुश ख़बरी सुना दीजिये, ये दर्दनाक अज़ाब उस दिन होगा जिस दिन उस सोने और चांदी को जहन्नम की आग में तपाया जायेगा, फिर उसके ज़रिये उनकी पेशानी, उनके पहलू और उनकी पीठ को दाग़ा जायेगा (और उनसे कहा जायेगा) ये है वो ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिये जमा किया था, तो आज तुम उस ख़ज़ाने का मज़ा चखो जो तुम अपने लिये जमा कर रहे थे।"

लिहाज़ा हर साहबे निसाब मुसलमान के लिये ज़रूरी है कि वो पूरा–पूरा हिसाब करके ज़कात की अदायगी करे। बहुत से लोग बिना हिसाब के ही कुछ रक़म या दूसरी चीज़ें ग़रीबों को देकर अपने को ज़िम्मेदारी से बरी समझते हैं, ये तरीक़ा सही नहीं है, पूरा हिसाब लगाकर ज़कात देना ज़रूरी है।

ज़कात फ़र्ज़ होने की शर्तें

ये भी ध्यान रहे कि ज़कात न हर व्यक्ति पर फ़र्ज़ होती है न हर माल पर, बल्कि इसके वाजिब होने के लिये उस व्यक्ति का अक़्ल वाला होना और बालिग़ होना, साहबे निसाब होना, माल पर साल गुज़रना, उस माल का कर्ज़ से ख़ाली होना, इसी तरह उसका हाजते अस्लिया से ख़ाली होना शर्त है, एक भी शर्त न पायी जाये तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी।

अमवाले ज़कात

जिन चीज़ों पर ज़कात वाजिब है वो बुनियादी तौर पर चार हैं।

1.जानवर 2.सोना 3.चांदी (नक़दी भी सोना और चांदी के हुक्म में आती है) 4.व्यापारिक माल

रुप्या या सोने–चांदी का निसाब

चांदी का निसाब दो सौ दिरहम जबकि सोने का

निसाब बीस मिसक़ाल है। हिन्दुस्तान के उलमा की तहक़ीक़ चांदी के दो सौ दिरहम यानि साढ़े बावन तोला (612.360 ग्राम) और सोने के बीस मिसक़ाल यानि साढ़े सात तोला (87.480 ग्राम) के बराबर होते हैं। जहां तक नक़दी और व्यापारिक माल का संबंध है तो उनकी मिल्कियत का अन्दाज़ा भी चांदी के निसाब से किया जायेगा यानि अगर किसी के पास चांदी के निसाब के बराबर नक़द रक़म या व्यापारिक माल है तो वो शरीअत के अनुसार साहबे निसाब है।

फिर ये भी ध्यान रहे कि सोना—चांदी चाहे इस्तेमाल हो रहे ज़ेवर की शक्ल में हो या ग़ैर इस्तेमाली ज़ेवर की शक्ल में हो, चाहे सिक्कों या ज़ुरूफ़ वग़ैरह की शक्ल में हो अगर वो निसाब के बराबर है और उस पर साल गुज़र जाता है तो उसकी ज़कात बहरहाल वाजिब हो जायेगी। यही हुक्म नक़द रक़म का भी है, लेकिन बक़िया दूसरे माल यानि उरूज़ में ये भी शर्त है कि वो व्यापार की नियत से हों, वरना उन पर ज़कात वाजिब नहीं होगी।

किसी के पास साढ़े सात तोला (612.480 ग्राम) सोना न हो लेकिन उसके पास कुछ सोना और कुछ चांदी मौजूद हो तो क्या उसके ऊपर ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस मसले में दो राय हैं।

1— इमाम शाफ़ई और कई दूसरे हज़रात के नज़दीक उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। इमाम शाफ़ई ने अपनी किताब अलउम में इस पर बहसकी है कि उसके पास न सोने का निसाब है न चांदी का तो उस पर ज़कात कैसे वाजिब हो सकती है जबकि दोनो अलग—अलग जिंस हैं।

2— दूसरी राय हनफ़ी और कई दूसरे लोगों की है कि अगर दोनों के मिलाने से निसाब पूरा हो जाये तो ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस पर बहस बुकैर इब्ने अब्दुल्लाह (रज़ि0) के असर से कि ज़कात निकालने में सहाबा का तरीक़ा चांदी और सोने के मिलाने का था। फिर दोनों क़ीमत के एतबार से एक ही जिंस हैं। बहरहाल अक़्ली दलील दोनों तरफ़ से मज़बूत हैं लेकिन नक़ली दलील में इस एतबार से फ़रीक़ अव्वल का मोकिफ़ कुछ मज़बूत क़रार दिया जाता है कि हज़रत बुकैर की रिवायत हदीस की किताब में नहीं मिलती। फिर इमाम अबू हनीफ़ा और साहिबैन की दरमियान ये इख़्तिलाफ़ है कि सोने और चांदी को मिलाने की कैफ़ियत क्या होगी।

इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक दोनों को क़ीमत के एतबार से मिलाया जायेगा। यानि अगर किसी के पास दो तोला सोना और दो तोला चांदी है तो ये देखा जायेगा कि दो तोला सोना अगर बेच दिया जाये तो क्या साढ़े बावन तोला या उससे ज़्यादा चांदी हासिल हो जायेगी। अगर इतनी ज़्यादा चांदी हासिल हो सकती है तो वो साहिबे निसाब माना जायेगा। फ़तवा इमाम साहब के क़ौल ही पर है। जब कि साहिबैन के नज़दीक दोनों को ज़ुज़ के एतबार से मिलाया जायेगा यानि वज़न के एतबार से अगर आधा निसाब सोने का और आधा चांदी या दो तिहाई साने का और एक तिहाई चांदी का या एक चौथाई सोने का और तीन चौथाई चांदी का पाया जा रहा हो तो ज़कात वाजिब हो जायेगी वरना नहीं।

इमाम साहब के मुफ़ता बिही क़ौल के मुताबिक़ अगर सोने चांदी की मामूली मिक़दार भी किसी के पास हो तो वो साहिबे निसाब बन जायेगा और उसके लिये ज़कात लेना जायज़ नहीं रहेगा। इतनी मामूली मिक़दार बिल्कुल मामूली लोगों के पास भी आम तौर से रहती है। इस तनाज़ुर में ये सवाल उठाया जाता है कि क्या मौजूदा हालात में साहिबैन के कौल को अख़्तियार किया जा सकता है। इसलिये कि साहिबैन का क़ौल अख़्तियार कर लिया जाये तो इसमे ज़कात देने वाले और लेने वाले दोनों का ख़्याल हो जायेगा और तवाज़ुन क़ायम रहेगा।

राक़िम के ख़्याल से ऐसा करने की गुंजाइश है। इसलिये किइस मसले का संबंध हालात के बदलने से है और इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि हालात बदल जाये तो हुक्म बदल जाता है। फिर ये तो इफ़्ता के हुक्म में भी लिखा हुआ है कि इख़्तिलाफ़ अगर साहिबैन और इमाम साहिब के बीच में तो मुफ़्ती उनमें से किसी पर भी फ़तवा दे सकता है। लिहाज़ा इज्तिमाई इज्तिहाद के इस दौर में उलमा का इत्तिफ़ाक़ हो जाये तो इसकी गुंजाहश होगी। फिर इमाम साहब की एक रिवायत साहिबैन के क़ौल के मुताबिक़ भी है लिहाज़ा इमाम साहब के इस क़ौल को इस्तहबाब पर महमूल करके ततबीक़ की जा सकती है। मुफ़्ती किफ़ायत उल्ला साहब ने किफ़ायतुल मुफ़्ती में इसी तरह ततबीक़ दी है।

बात का ख़ुलासा ये है कि व्यापारिक माल वाले मसले में मुफ़्ता बिही हुक्म से हटने की इजाज़त नहीं दी

जा कसती जबकि दूसरे मसले में अगर उलमा इत्तिफ़ाक़ कर लें तो इसकी गुंजाइश है।

हौलान–ए–हौल का मतलब

किसी के निसाब के बराबर ज़कात का माल है तो अगर साल के बीच में उस माल में इज़ाफ़ा होता है तो उस ज़ायद माल का हिसाब पहले से मौजूद माल की तारीख़ से किया जायेगा, जब बक़िया माल पर साल गुज़र जाये तो उसकी ज़कात के साथ उस ज़ायद माल की भी ज़कात निकालना ज़रूरी होगा ये नहीं कि हर बढ़ोत्तरी के लिये अलग से साल का हिसाब किया जाये और ये कि साल गुज़रने में अंग्रेज़ी महीनों के बजाये चांद के महीनों का हिसाब किया जायेगा।

किस दिन की मालियत का एतबार होगा

व्यापारिक माल के बारे में गुज़र चुका है कि उन पर ज़कात फ़र्ज़ है। जैसे अगर किसी की दुकान या कोई कारोबार है तो साल गुज़रने के बाद उसके पास जो कुछ नक़दी या सामान है उसकी ज़कात उस पर फ़र्ज़ है और सामान की मिल्कियत लगाते वक़्त उनकी उस दिन की मालियत का एतबार होगा जिस दिन वो उनकी ज़कात अदा कर रहा है।

हाजत–ए–अस्लिया (ज़रुरी ज़रुरतें) का मतलब

जो चीज़ अस्ल ज़रूरतों के लिये हो उसमें ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती, अस्ल ज़रूरत की मिसाल में फ़ुक़्हा ने रहने के मकान, पहनने के कपड़े, सवारी के जानवर और गाड़ी, खेती या फ़ैक्ट्री के यन्त्र, और घर के फ़र्नीचर इत्यादि का ज़िक्र किया है।

ज़कात की मात्रा

ज़कात की वाजिब मात्रा किसी भी माल में उसका चालीसवा हिस्सा या ढ़ाई प्रतिशत तय की गयी है।

शेयर पर ज़कात

ज़कात हर प्रकार के व्यापारिक माल पर ाजिब है चाहे वो जानवरों का व्यापार हो या गाड़ियों का व्यापार हो या ज़मीन का और क्योंकि शेयर भी व्यापारिक माल में दाख़िल हैं लिहाज़ा उन पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। अगर किसी ने शेयर इ समक़सद से ख़रीदे हैं कि उन पर सालाना नफ़ा हासिल करेगा। उनको बेचेगा नही तो उसको अपनी कम्पनी से ख़बर करनी चाहिये कि उसका कितना सामान अचल है जैसे बिल्डिंग और मशीनरी इत्यादि की शक्ल और कितना माल चल है जैसे नक़द कच्चा माल तैयार माल इत्यादि। जितनी सम्पत्ति अचल है उन पर ज़कात नहीं होगी। और जितनी सम्पत्ति चल है उन पर ज़कात वाजिब होगी। अगर कम्पनी के माल की तफ़्सील न मिल सके तो इस हालत में एहतियात के तौर पर पूरी ज़कात अदा कर दी जाये। और अगर शेयर इ समक़सद से ख़रीदे हैं कि जब बाज़ार में उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको ख़रीद करके लाभ कमायेगें तो पूरे शेयर की पूरी बाज़ारी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होगी। जैसे आपने पचास रूप्ये के हिसाब से शेयर ख़रीदे और मक़सद ये था कि जब उनकी कीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेचकर नफ़ा कमायेंगे। उसके बाद जिस दिन आपने ज़कात का हिसाब निकाला उस दिन शेयर की क़ीमत साठ रूप्ये हो गयी तो अब साठ रूप्ये के हिसाब से उन शेयर की मालियत निकाली जायेगी और उस पर ढ़ाई प्रतिशत के हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी।

प्राविडेन्ड फ़न्ड पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इन्सान का मुकम्मल क़ब्ज़ा भी हो। इसी वजह से फ़ुक़्हा ने फ़रमाया है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना दुश्वार है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूप्यों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब ग़ैर मुत्वक़्क़े तौर पर ये माल मिल जाये तो गुज़रे हुए सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

जहां तक प्राविडेन्ड फ़न्ड का संबंध है तो इसमें एक हिस्सा वो होता है जो शासनउसमें मिलाकर देता है। जहां तक इस दूसरी इज़ाफ़ी रक़म का संबंध है तो चाहे उसे ईनाम कहा जाये या मुलाज़िम की उजरत जिसका अभी मालिक नहीं हुआ है, लिहाज़ा उस पर गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब होने की कोई वजह नहीं है। क़ाबिले बहस फ़न्ड का वो हिस्सा है जो मुलाज़िमत के दौरान तन्ख़्वाह से कटकर जमा होता है इसका मामला ये है कि मुलाज़िमीन को इसकी मिलिक्यत है लेकिन उस पर क़ब्ज़ा नहीं हासिल है लिहाज़ा इस रक़म पर भी गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। उल्माए मुहक़्क़ीन का रूझान इसी तरफ़ है।

क़र्ज़ का मिन्हा करना

अगर कोई शख़्स निसाब का मालिक है लेनिक वो

साथ ही क़र्ज़दार भी है तो क़र्ज़ के बराबर माल पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। अगर क़र्ज़ के बराबर मिन्हा करने के बाद भी निसाब के बराबर माल बच रहा है तो उस पर उसी के बराबर ज़कात वाजिब हो जायेगी।

ज़कात के मुस्तहिक़

ज़कात की हैसियत चूंकि केवल आम इन्फ़ाक़ और इन्सानी मदद की नहीं है बल्कि ये एक अहम इस्लामी इबादत और शरई फ़रीज़ा है, इसलिये शरीअत ने इसके ख़र्च निश्चित कर दिये हैं, अल्लाह तआला का इरशाद है: "ज़कात फ़क़ीरों, ग़रीबों, आमलीन (ज़कात की जमा व तक़सीम के कार्यकर्ता) मुअलफ़तुल क़ुलूब, गुलाम, क़र्ज़दार, अल्लाह के रास्ते में (जिहाद करने वाले) और मुसाफ़िरों के लिये, ये अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर हुआ काम है और अल्लाह बड़ा इल्म वाला और हिकमत वाला है।"

ज़कात के मसारिफ़ क़ुरआन मजीद की ऊपर जिक्र की हुई आयत में तफ़सील से बयान किये गये हैं। इसके संबंध में बात ये है कि ज़कात सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जासकती है जो फ़क़ीर या मिस्कीन हों। यानि जिनके पास या तो माल ही न हो या अगर हो तो निसाब तक न पहुंचता हो। यहां तक कि अगर उनकी मिल्कियत में ज़रूरत से ज़्यादा ऐसा सामान मौजूद है जो साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत तक पहुंच जाता है तो वो ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं है। ज़कात का मुस्तहिक़ वो है जिसके पास साढ़े बावन तोला चांदी की मिल्कियत की रक़म या उतनी मालियत का कोई सामान ज़रूरत से ज़्यादा न हो। इसमें भी शरीअत का हुक्म ये है कि मुस्तहिक़ को मालिक बना दिया जाये और वो जिस तरह चाहे उसे खर्च करे। इसीलिये बिल्डिंग की तामीर में ज़कात नहीं लग सकती, न ही किसी इदारे के कर्मचारी की पगार में लग सकती है। इसी तरह कफ़न दफ़न में ज़कात का पैसा लगाना ठीक नहीं है। ज़कात अदा करने वाले को चाहिये कि अच्छी तरह तहक़ीक़ करके सही मसरफ़ में लगाने की कोशिश करे। अफ़ज़ल ये है कि सबसे पहले अपने अज़ीज़ व अक़ारिब में मिस्कीन की तलाश करे। रिश्ते दारों में ज़कात अदा करने से डबल सवाब मिलता है। एक ज़कात अदा करने का दूसरे सिला रहमी करने का।

मुस्तहिक़ होने के साथ साथ एक ज़रूरी शर्त ये है कि मुस्तहिक़ मुसलमान हो। इसीलिये ग़ैर मुस्लिम मुस्तिहिक़ को ज़कात की रक़म देना ठीक नहीं है। आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि ज़कात मुसलमान मालदारों से ली जायेगी और ग़रीब मुसलमानों पर ख़र्च की जायेगी। (बुख़ारी 1496)

ज़कात निम्नलिखित लोगों को दी जा सकती है:

1– फ़क़ीर (जिनके पास निसाब के बराबर माल न हो) 2– मिस्कीन (जो किसी भी माल के मालिक न हो) 3– इस्लामी हुकूमत के वो कारिन्दे जो ज़कात व उश्र की वसूली पर मुक़र्रर होते हैं। 4– ऐसे गुलाम जो अपनी आज़ादी के लिये मदद के तलबगार हों। 5– ऐसे क़र्ज़दार जिनके क़र्ज़ से सबक़दोशी के लिये ज़कात दी जाये जबकि उनके पास अपनी ज़ाति मालियत ज़कात की अदायगी के लिये बाक़ी न हो। 6– वो मुसाफ़िर जो सफ़र के दौरान ज़रूरत मन्द हो जायें।

किन लोगों को ज़कात देना जायज़ नहीं:

1– बाप, दादा, परदादा, नाना, परनाना, इत्यादि। इसी तरह दादी, नानी इत्यादि। 2– लड़के, लड़कियां, पोते, नवासे, पोतियां, नवासियां इत्यादि। 3– बीवी और शौहर। 4– गुलाम बांदी। 5– साहबे निसाब, मालदार। 6– मालदार छोटा बच्चा। 7– सादात (बनू हाशिम, आले अली, आले अब्बास इत्यादि)

रमज़ान में ज़कात अदा करने का सवाब

रमज़ानुल मुबारक में चूंकि हर फ़र्ज़ इबादत का सवाब सत्तर गुना बढ़ जाता है इसलिये रमज़ान में ज़कात देने में इन्शाअल्लाह सत्तर गुना सवाब की उम्मीद है। (लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि सारी ज़कात रमज़ान में ही निकाल दी जाये और ग़ैर रमज़ान में फ़क़ीरों की ज़रूरतों का ख़्याल न रखा जाये, बल्कि ज़रूरत व मस्लिहत के एतबार से ख़र्च करने का एहतिमाम करना चाहिये)

एक फ़क़ीर को एक वक़्त में मुकम्मल निसाब का मालिक बनाना मकरूह है

एक फ़क़ीर को एकसाथ इतना माल देना कि वो साहबे निसाब हो जाये बेहतर नहीं है, अलबत्ता अगर वो क़र्ज़दार हो और कर्ज की अदायगी के लिये बड़ी रक़म दी तो हर्ज नहीं।

ज़रुरी तम्बीह: कुछ मालदार इस मसले से ग़लत फ़ायदा उठाते हैं, वो इस तरह कि कारोबार या हुकूमत का क़र्ज़ इतना ज़्यादा हो जाता है कि उनके अस्ल सरमाये से बढ़ जाता है तो वो लोगों के पास जाकर ये

कहते हैं कि हम क़र्ज़दार होने की वजह से ज़कात के मुस्तहिक़ हो गये। इसलिये ज़कात के माल से हमें क़र्ज़ अदा करने में सहयोग दिया जाये।

इस तरह वो लाखों रूपये का मुतालबा रखते हैं तो ऐसे लोगों को चाहिये कि वो पहले अपनी ज़ाति मालियत जायदाद और गाड़ियां वग़ैरह बेच करके अपना कर्ज़ अदा करें, और इसके बाद भी क़र्ज़ अदा न हो तो अब सहयोग की मांग करें, इससे पहले उनका अपने को ज़कात का मुस्तहक़ कहना ग़रीबों का हक़ मारना है।

प्राविडेन्ड फ़न्ड पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इन्सान का मुकम्मल क़ब्ज़ा भी हो। इसी वजह से फ़ुक़्हा ने फ़रमाया है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना दुश्वार है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूप्यों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब ग़ैर मुत्वक़्क़े तौर पर ये माल मिल जाये तो गुज़रे हुए सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

गिरवी माल पर ज़कात

कर्ज़दार व्यक्ति को कर्ज़ से बरी करने से ज़कात अदा न होगी, अलबत्ता यदि फ़क़ीर मक़रूज़ को ज़कात की रक़म दी, फिर उससे अपना क़र्ज़ वसूल कर लिया तो यह ठीक है।

डिपाज़िट पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इनसान का सम्पूर्ण नियन्त्रण भी हो। इसी कारण से फ़ुक़्हा (धर्मज्ञाताओं) ने कहा है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना मुश्किल है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूपयों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब अप्रत्याशित रूप से यह माल मिल जाये तो गुज़रे हुए सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

(पेज 8 का शेष)... सच्चाई क्या है?

यहूद रसूलुल्लाह (स0अ0व0) को इस तरह पहचानते हैं जैसे अपनी औलाद को पहचानते हैं, उनको यक़ीन है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) अल्लाह के नबी हैं, उनकी मज़हबी किताब में जो तफ़सीलात हैं और जो अलामात हैं, वह सब रसूलुल्लाह (स0अ0व0) पर बिल्कुल मुन्तबिक़ होती हैं, लेकिन हठधरमी इस बात पर थी कि यह नबी हमारे ख़ानदान में क्यों नहीं आया, अब तक बनी इस्राईल में सारे अम्बिया होते चले आ रहे थे, मगर आख़िर में बनू इस्लामईल में नबी कहां से आ गया, गोया वह नुबूव्वत के ठेकेदार बन बैठे थे, इसीलिए अल्लाह ने उनसे कहा कि नुबूव्वत देना हमारे अख़्तियार में है, तो हम किसी को भी नबी बना सकते हैं, वाक़्या यह है कि जब आदमी का मिज़ाज बिगड़ता है तो पता नहीं दिमाग़ कहां-कहां जाता है, अहले किताब यहां तक कहते थेः "और यहूद व नसारा कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे और उसके चहीते हैं।" (सूरह माइदाः 18)

यानि हम ख़ुदा के चहीते हैं, अब यह जो हमारा रिश्ता है, उसके बाद भी अल्लाह कहीं और नबी बना दे यह कैसे मुमकिन है, गोया यह उनके दिमाग़ का ख़न्नास और बेवकूफ़ी थी, इसीलिए अल्लाह तआला ने उन्हें हिदायत नहीं दी।

अबूसुफ़ियान के जवाब से हरकुल के समझ में पूरी बात आ गई थी, लेकिन दौलत और सल्तनत की हिस्र मानेअ हुई और ईमान की तौफ़ीक़ न हो सकी, इसलिए कि हज़रत अबूसुफ़ियान ने जो सिफ़ात बयान की थीं, वह बिल्कुल दुरुस्त थीं, ज़ाहिर है कि उनको सच बोलना था, लिहाज़ा वह जो कुछ जानते थे, उन्होंने सच बोलकर वह बयान कर दिया और बीच में इतनी सी एक बात कह गए कि वह (नबी) यह भी कहते हैं कि बाप-दादा जो करते चले आए हैं वह सब छोड़ दो और यह बड़ा मुश्किल काम होता है, लिहाज़ा जब हरकुल ने नबी की सिफ़ात को सुना तो वह पूरी बात समझ गया और उसको अंदाज़ा हो गया कि यह नबी बरहक़ हैं, लेकिन ईमान की तौफ़ीक़ नहीं हुई।

इस्लाम पर महापुरूषों के विचार

इदारा

इन्सानी भाईचारा और इस्लाम पर महात्मा गाधी का बयानः "कहा जाता है कि यूरोप वाले दक्षिणी अफ्रीका में इस्लाम के प्रसार से भयभीत हैं, उस इस्लाम से जिसने स्पेन को सभ्य बनाया, उस इस्लाम से जिसने मराकश तक रोशनी पहुँचाई और संसार को भाईचारे की इंजील पढाई। दक्षिणी अफ्रीका के यूरोपियन इस्लाम के फैलाव से बस इसलिए भयभीत हैं कि उनके अनुयायी गोरों के साथ कहीं समानता की माँग न कर बैठें। अगर ऐसा है तो उनका डरना ठीक ही है। यदि भाईचारा एक पाप है, यदि काली नस्लों की गोरों से बराबरी ही वह चीज है, जिससे वे डर रहे हैं, तो फिर (इस्लाम के प्रसार से) उनके डरने का कारण भी समझ में आ जाता है।"

इस्लाम के इस पहलू पर विचार व्यक्त करते हुए सरोजनी नायडू कहती हैंः "यह पहला धर्म था जिसने जम्हूरियत (लोकतंत्र) की शिक्षा दी और उसे एक व्यावहारिक रूप दिया। क्योंकि जब मीनारों से अजाद दी जाती है और इबादत करने वाले मस्जिदों में जमा होते हैं तो इस्लाम की जम्हूरियत (जनतंत्र) एक दिन में पाँच बार साकार होती है, जब रंक और राजा एक–दूसरे से कंधे से कंधा मिला कर खडे होते हैं और पुकारते हैं, 'अल्लाहु अकबर' यानी अल्लाह ही बडा है। मैं इस्लाम की इस अविभाज्य एकता को देख कर बहुत प्रभावित हुई हूँ, जो लोगों को सहज रूप में एक–दूसरे का भाई बना देती है। जब आप एक मिस्री, एक अलजीरियाई, एक हिन्दुस्तानी और एक तुर्क (मुसलमान) से लंदन में मिलते हैं तो आप महसूस करेंगे कि उनकी निगाह में इस चीज का कोई महत्व नहीं है कि एक का संबंध मिस्र से है और एक का वतन हिन्दूस्तान आदि है।"

विश्व प्रसिद्ध शायर गोयटे ने पवित्र कुरआन के बारे में एलान किया थाः "यह पुस्तक हर युग में लोगों पर अपना अत्यधिक प्रभाव डालती रहेगी।"

जार्ज बर्नाड शा का भी कहना हैः "अगर अगले सौ सालों में इंग्लैंड ही नहीं, बल्कि पूरे यूरोप पर किसी धर्म के शासन करने की संभावना है तो वह इस्लाम है।"

'इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' में उल्लिखित हैः "समस्त पैगम्बरों और धार्मिक क्षेत्र के महान व्यक्तित्वों में मुहम्मद सबसे ज़्यादा सफल हुए हैं।"

प्रेमचंद जी "इस्लामी सभ्यता" पुस्तिका जो मधुर संदेश संगम, दिल्ली से भी छपी है, में लिखते हैंः "जहां तक हम जानते हैं कि किसी धर्म ने न्याय को इतनी महानता नहीं दी जितनी इस्लाम ने।"

'संसार की किसी सभ्य से सभ्य जाति की न्याय–नीति की इस्लामी न्याय–नीति से तुलना कीजिए, आप इस्लाम का पल्ला झुकता हुआ पाएँगे।"

"हिन्दू–समाज ने भी शूद्रों की रचना करके अपने सिर कलंक का टीका लगा लिया। पर इस्लाम पर इसका धब्बा तक नहीं। गुलामी की प्रथा तो उस समस्त संसार में भी, लेकिन इस्लाम ने गुलामों के साथ जितना अच्छा सलूक किया उस पर उसे गर्व हो सकता है।"

"हमारे विचार में वही सभ्यता श्रेष्ठ होने का दावा कर सकती है जो व्यक्ति को अधिक से अधिक उठने का अवसर दे। इस लिहाज से भी इस्लामी सभ्यता को कोई दूषित नहीं ठहरा सकता।"

"हम तो याहं तक कहने को तैयार हैं कि इस्लाम में जनता को आकर्षित करने की जितनी बडी शक्ति है उतनी और किसी सस्था में नही है। जब नमाज पढते समय एक मेहतर अपने को शहर के बडे से बडे रईस के साथ एक ही कतार में खडा पाता है तो क्या उसके हृदय में गर्व की तरंगे न उठने लगती होंगी। उसके विरूद्ध हिन्दू समाज न जिन लोगों को नीच बना दिया है उनको कुएं की जगत पर भी नहीं चढने देता, उन्हें मंदिरों में घुसने नहीं देता।"

स्नेह और सहिष्णुता के प्रचारक स्वामी विवेकानन्द कहते हैंः "पैगम्बर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) संसार मे समानता के संदेशवाहक थे। वे मानवजाति में स्नेह और सहिष्णुता के प्रचारक थे। उनके धर्म में जाति–बिरादरी, समूह, नस्ल आदि का कोई स्थान नहीं है।"

स्वामी विवेकानन्द इस्लाम के बड़े प्रशंसक और इसके भाईचारा के सिद्धांत से अभिभूत थे। वेदान्ती मस्तिष्क और

इस्लामी शरीर को वह भारत की मुक्ति का मार्ग मानते थे। अल्मोड़ा से दिनांक 10 जून 1898 को अपने एक मित्र नैनीताल के मुहम्मद सरफराज हुसैन को भेजे पत्र में उन्होंने लिखा किः ''अपने अनुभव से हमने यह जाना है कि व्यावहारिक दैनिक जीवन के स्तर पर यदि किसी धर्म के अनुयायियों ने समानता के सिद्धांत को प्रशंसनीय मात्र में अपनाया है तो वह केवल इस्लाम है। इस्लाम समस्त मनुष्य जाति को एक समान देखता और बर्ताव करता है। यही अद्वैत है। इसलिए हमारा यह विश्वास है कि व्यावहारिक इस्लाम की सहायता के बिना, अद्वैत का सिद्धांत चाहे वह कितना ही उत्तम और चमत्कारी हो विशाल मानव–समाज के लए बिल्कुल अर्थहीन है।''

स्वामी जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा है किः ''भारत में इस्लाम की ओर धर्म परिवर्तन तलवार (बल प्रयोग) या धोखाधड़ी या भौतिक साधन देकर नहीं हुआ था।''

सी एस श्रीनिवास ''हिस्ट्री आफ इंडिया'' में, जो मद्रास से 1937 मे प्रकाशित हुई थी, लिखते हैंः ''इस्लाम के पैगबर ने जब एक शासक का स्थान प्राप्त किया तो भी आपका जीवन पूर्व की भांति सादा रहा। आप सुधारक भी थे और विजेता भी। आपने लोगों के अख़्लाकष् को बुलंद किया। प्रतिशोध लेने को अनुचित ठहराया और खोज–बीन के बिना रक्तपात से रोका, विखंडित कष्बीलों को एक कषैम बना दिया और एक ऐसा रिश्ता दिया जो ख़ानदानी रिश्तों से ज्यादा टिकाऊ था।आपने लोगों को पस्ती, द्वेष और पक्षपात में गर्क पाया, लेकिन उनको सदाकत का संदेश देकर बुलंद कर दिया। उनको आपसी खानदानी झगड़े में लिप्त पाया, मगर सहिष्णुता और भ्रातृत्व के रिश्ते में जोड़ दिया। आप एक फरिश्ता–ए–रहमत बनकर दुनिया में तशरीफ लाए।''

आदर्श जीवनजगत महर्षि पैगम्बरे–इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विषय में महात्मा गांधी के विचार इस तरह हैंः ''मैं पैगम्बरे–इस्लाम की जीवनी का अध्ययन कर रहा था। जब मैंने किताब का दूसरा भाग भी खत्म कर लिया तो मुझे दुख हुआ कि इस महान प्रतिभाशाली जीवन का अध्ययन करने के लिए अब मेरे पास कोई और किताब बाकी नहीं। अब मुझे पहले से भी ज़्यादा विश्वास हो गया है कि यह तलवार की शक्ति न थी जिसने इस्लाम के लिए विश्व क्षेत्रा में विजय प्राप्त की, बल्कि यह इस्लाम के पैगम्बर का अत्यन्त सादा जीवन, आपकी निःस्वार्थता, प्रतिज्ञा–पालन और निर्भयता थी, आपका अपने मित्रों और अनुयायियों से प्रेम करना और ईश्वर पर भरोसा रखना था। यह तलवार की शक्ति नहीं थी, बल्कि ये सब विशेषताएं और गुण थे जिनसे सारी बाधाएं दूर हो गयीं और आपने समस्त कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर ली।मुझसे किसी ने कहा था कि दक्षिण अफ्रीकष में जो यूरोपियन आबाद हैं, इस्लाम के प्रचार से कांप रहे हैं, उसी इस्लाम से जिसने मोरक्को में रौशनी फैलायी और संसार–निवासियों को भाई–भाई बन जाने का सुखद संवाद सुनाया। निःसन्देह दक्षिण अफ्रीका के यूरोपियन इस्लाम से नहीं डरते हैं, लेकिन वास्तव में वह इस बात से डरते हैं कि अगर इस्लाम कुबूल कर लिया तो वह श्वेत जातियों से बराबरी का अधिकार मांगने लगेंगे।आप उनको डरने दीजिए। अगर भाइ–भाई बनना पाप है, यदि वे इस बात से परेशान हैं कि उनका नस्ली बड़प्पन कायम न रह सके तो उनका डरना उचित है, क्योंकि मैंने देखा है कि अगर एक जूलो ईसाई हो जाता है तो वह सफेद रंग के ईसाइयों के बराबर नहीं हो सकता। किन्तु जैसे ही वह इस्लाम ग्रहण करता है, बिल्कुल उसी वक्त वह उसी प्याले में पानी पीता है और उसी तश्तरी में खाना खाता है जिसमें कोई और मुसलमान पानी पीता और खाना खाता है, तो वास्तविक बात यह है जिससे यूरोपियन कांप रहे हैं।''

स्वामी लक्ष्मण प्रसाद लिखते हैं, ''आस्था, विश्वास, पूजा–अर्चना, नैतिकता, सामाजिकता के सम्पूर्ण आवाहक हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आगमन से पहले दुनिया में कहीं कोई आशा की किरन दिखाई नहीं देती थी, विश्वव्यापी गुमराहियों और भयंकर अंधकार में कहीं सभ्यता और संस्कृति की रौशनी नजर नहीं आती थी। जब शराफत का नामो–निशान मिट चुका था, जब प्रकृति का वास्तविक सौंदर्य और आध्यात्मिकता की सुन्दरता ईश्वर के इन्कार मिथ्याकर्म के अंधकारों में छिप गई थी, इन्सान ख़ुदा की कष्द्र और महत्ता को भूलकर अपने गले में कुकर्म और मूर्तिपूजा की लानत की जंजीर पहन चुका था, एक बार इन्सानियत मरकर फिर जिन्दा हुई। एशिया महाद्वीप के दक्षिण–पश्चिम में एक बड़ा प्रायद्वीप है जो अरब के नाम से मशहूर है। इसी अज्ञानता और बुराई के केन्द्र अरब के फारान पर्वत की चोटियों से एक नूर चमका जिसने दुनिया के हालात को आमूल रूप से बदल दिया। गोशा–गोशा नूरे–हिदायत से जगमगा दिया।आज से तेरह सौ सदियां पहले इसी गुमराह देश मक्का की गलियों से एक क्रान्तिकारी आवाज उठी जिसने जुल्म–सितम के वातावरण में तहलका मचा दिया। यहीं से मार्गदर्शन का वह स्रोत फूटा जिसने दिलों की मुरझाई हुई खेतियां सरसब्ज कर दीं। इसी रेगिस्तानी, चमनिस्तान में

रूहानियत का वह फूल खिला जिसकी रूहपर्वर महक ने नास्तिकता की दुर्गन्ध से घिरे इन्सानों के दिल व दिमागों को सुगन्धित कर दिया।''

हिन्दी के वरिष्ठतम साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र लिखते हैंः ''जिस समय अरब देशवाले बहुदेवोपासना के घोर अंधकार में फंस रहे थे, उस समय महात्मा मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जन्म लेकर उनको एकेश्वरवाद का सदुपयोग दिया। अरब के पश्चिम में ईसा मसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था, किन्तु वह मत अरब, फारस इत्यादि देशों में प्रबल नहीं था और अरब जैसे कट्टर देश में महात्मा मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अतिरिक्त और किसी का काम न था कि वहां कोई नया मत प्रकाश करता। उस काल के अरब के लोग मूर्ख, स्वार्थ–तत्पर, निर्दय और वन्य–पशुओं की भांति कट्टर थे। यद्यपि उनमें से अनेक लोग अपने को इब्राहीम अलैहिस्सलाम के वंश का बतलाते और मूर्ति पूजा बुरी जानते किन्तु समाज परवश होकर सब बहुदेव उपासक बने हुए थे। इसी घोर समय में मक्के से मुहम्मद चन्द्र उदय हुआ और एक ईश्वर का पथ परिष्कार रूप से सबको दिखाई पड़ने लगा।''

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र समग्रसमस्त मानवजाति के मार्गदर्शकलाला काशीराम चावला 'ऐ मुस्लिम भाई' में लिखते हैंः ''समस्त धर्मों के प्रणेता और संस्थापक, बड़े–बड़े घरानों में पैदा हुए और उनकी पैदाइश पर बड़ी धूम–धाम मची, बड़े हर्ष वाद्य बजे। उदाहरणतः हजरत ईसा अलैहिस्सलाम, बुद्व–भगवान, हजरत मूसा अलैहिस्सलाम, भगवान कृष्ण, भगवान महावीर, गुरू नानक सबका बचपन नितांत लाड–प्यार और शानो–शौकत से गुजरा। लेकिन आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कष्टों का आरंभ जन्म से पहले ही हो चुका था।अभी आप माता के गर्भ ही में थे कि पिता का देहांत हो गया। छः वर्ष की अवस्था में मातृ–प्रेम से भी वंचित हो गये। दो साल दादा की गोद में खेले और आठवें वर्ष वे भी स्वर्ग सिधार गये और फिर आपके चाचा ने संभाला। इस प्रकार बचपन में शिक्षा–दीक्षा और सुख– शान्ति के समस्त साधन लुप्त हो गये। क्या वह ईश्वरीय चमत्कार नहीं कि ऐसी दशा में पला हुआ व्यक्ति आज मानवजाति के एक विशाल समूह का पथप्रदर्शक और नेता स्वीकार किया जा रहा है और उसने अरब जैसे बर्बर देश से निराश्रित अवस्था में संसार– निवासियों को मानवता का सन्देश दिया।किसे पता था कि ऐसा अप्रसिद्ध परिवार में जन्म लेने वाला अनपढ़ और अनाथ बालक अरब से अज्ञानता का नामो–निशान मिटाने वाला सुधारक बनेगा? समूचे संसार में इस्लामी पताका लहराने वाला रसूल होगा। कुरआन शरीफ का सन्देश पहुंचाने वाला नबी होगा? मूर्खों में महत्वपूर्ण क्रान्ति उत्पन्न करने वाला सुधारक होगा और एक बिल्कुल अनोखे नवीन धर्म का प्रकाश दिखाएगा? नितांत अल्प समय में स्वयं अशिक्षित होते हुए भी अपने बौद्विक ज्ञान से समस्त संसार के एक बहुत बड़े भाग को शिक्षा और ज्ञान से परिपूर्ण कर देगा? ऐसे ज्ञान से जो विश्व के समस्त मनुष्यों के लिए एक अनुकरणीय आदर्श है। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उदारता और समता, सत्य और न्याय एवं पड़ौसियों के स्वतत्वों का जो आदर्श संसार में स्थापित किया है, उसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सुव्यवहार और समता–भाव का यह हाल था कि आपने अपने संपूर्ण जीवन में कभी किसी दास या बालक या पशू तक को न मारा, न किसी को अपशब्द कहा, एक बार बिल्ली को प्यासा देखा तो वुजू के लोटे से पानी पिलाया। इसी तरह एक बार एक बिल्ली आपके बिस्तर पर सोई हुई थी, आपने उसे उस सुख से वंचित न किया, चिड़ियों और चींटियों के मारने के विरूद्ध आदेश दिया, कुत्तों को पानी पिलाने वालों के अपराध क्षमा किये। युद्ध के बन्दियों का सम्मान किया। नितांत महत्वपूर्ण युद्ध–नियम निर्माण किये, जिसमें स्त्री, बालक, वृद्ध, सोये हुए और निहत्थे पर अस्त्रा चलाने की मनाही की। फसलों और मकानों को हानि पहुंचाने से रोका।आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अन्य जातियों के सरदारों का आदर–सत्कार करते थे। अन्य धर्मों के विद्वानों और प्रतिष्ठित जनों से सम्मानपूर्वक मिलते थे। जहां अपने प्रिय अनुयायियों के लिए दिन–रात ईश्वर से प्रार्थना करते रहते थे, वहीं विरोधियों और शत्रुओं के लिए भी प्रार्थना करते थे। जब उहुद के युद्ध में आपके मुख पर पत्थर मारे गये और आपके दांत शहीद हो गये तो आपने फरमायाः ''हे मेरे ईश्वर! तू मेरी जाति के इन लोगों को क्षमा प्रदान कर, क्योंकि निस्सन्देह वे नहीं जानते (कि वे क्या कर रहे हैं)।''आपकी दानशीलता और उदार हृदयता अद्वितीय थी। प्रार्थी किसी धर्म या सम्प्रदाय का हो आपके द्वार से निराश न लौट सकता था। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह आदेश था कि सृष्टि के प्राणियों पर दया करो, ईश्वर से डरो। आप कर्ज लेकर भी लोगों की जरूरतें पूरी किया करते थे। आपकी आज्ञा थी कि (युद्ध

में) दुश्मन की लाश नष्ट न की जाए, औरतों और बच्चों की हत्या न की जाए, शरीर के अंगो को काट–काटकर प्राण–वध न किया जाए, न शरीर के किसी भाग को जलाया जाए। आपकी सत्यप्रियता, शुद्ध हृदयता, ईमानदारी और न्यायशीलता की प्रशंसा न केवल मुसलमान, बल्कि अबू जहल और अबू सुफयान जैसे खून के प्यासे दुश्मनों ने भी की, और इन्सान की वास्तविक प्रशंसा वही है जो विरोधी को भी मान्य हो और सच्ची बुराई वह होती है जिसे मित्रा भी निःसंकोच कह दे। क्या वह आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का चमत्कार नहीं है कि अरब के जाहिल, अक्खड़, लड़ाके, झगड़ालू, अंधविश्वासी, जुआरी, शराबी, डाकू, व्यभिचारी, प्रतिज्ञा–भंग, कन्यावध, सौतेली माताओं से विवाह करने वाले लोग आज सीधे–सादे यात्रियों और अतिथियों का आदर–सत्कार करने वाले, मेहनती, ईमानदार, सहायक, आज्ञापालक, समतावादी और ईश्वर पूजक दिखायी देते हैं। यह आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शिक्षा का अलौकिक चमत्कार है कि इतने अल्प समय में इन लोगों के आचार–व्यवहार, स्वभाव, प्रकृति में एक असाधारण क्रान्ति उत्पन्न कर दी। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इतने अधिक प्रभाव और अधिकार के बाद भी कभी अपने स्वभाव में परिवर्तन न होने दिया। एक यात्रा में भोजन तैयार न था। आपके साथियों ने मिलकर भोजन बनाने का निश्चय किया, लोगों ने एक–एक काम बांट लिया। साथियों के रोकने के बावजूद जंगल से लकड़ी लाने का काम आपने स्वंय लिया और फरमायाः

''कोई कारण नहीं कि मैं अपने आपको श्रेष्ठ समझूं।''बद्र की लड़ाई में सवारियों की संख्या कम थी। बारी–बारी लोग सवार होते थे, आप भी इसी प्रकार अपनी बारी पर चढ़ते और पैदल चलते।आपकी सादा जिन्दगी कहावत की सीमा तक पहुंच चुकी है। यह पहले लिखा जा चुका है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने घर का काम–काज अपने हाथ से स्वयं करते थे, कपड़ों में पेवंद लगाना, फटे जूते गांठना, झाड़ू देना, दूध दुहना, बाजार से सौदा–सुल्फ लाना आदि, यह सब काम हजरत की दिनचर्या में सम्मिलित थे। दिखावे और आडम्ब्र को बिल्कुल पसन्द न फरमाते थे। मोटे, फटे कपड़े पहनते, कुर्ते का तुक्मा खुला होता था, बनाव–सिंगार को नापसंद करते थे। एक बार आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपनी प्रिय सुपुत्री फातिमा जोहरा रजियल्लाहु अन्हा के घर गये। लेकिन दीवारों पर पर्दे लटके हुए देखकर वापस चले आये। कारण पूछने पर आपने फरमायाः''जिस घर में बनावट–सजावट में दिल लगा रहता हो, वहां मैं नहीं जा सकता।''ऐसा क्यों था? इसलिए कि उनके पास वह ईश्वरीय आदेश पहुंच चुका था कि ईश्वरीय प्रेम के सम्मुख सांसारिक प्रेम तुच्छ है।कुरआन में एक जगह कहा गया हैः

''ऐ (ईश्वर पर) विश्वास रखने वालो! तुम्हें तुम्हारे (सांसारिक) धन और संतान ईश्वर उपासना से गाफिल न कर दें, और जो ऐसा करेगा वह हानि उठाने वालों में है।''आप सारी–सारी रात ईश्वर की उपासना में लीन रहते थे। जब घर के लोग सो जाते तो आप चुपचाप बिस्तर से उठकर ईश्वर–स्मरण में लग जाते। आपकी सुपत्नी हजरत आइशा सिद्दीक रजियल्लाहु अन्हा फरमाती हैं कि एक रात मेरी आँख खुली तो आपको बिस्तर पर न पाया, मैं समझी आप किसी और हरम (पत्नी) के हुज्रे (कमरे) में तशरीफ ले गये हैं, किन्तु अंधेरे में टटोला तो मालूम हुआ कि आपका पवित्रा मस्तक धरती पर है और आप ईश्वर–प्रार्थना में लीन हैं। यह देखकर आप बहुत लज्जित हुईं कि आपका विचार क्या था और आप किस दशा में हैं। इसी का नाम इस्लाम है। इस्लाम का अर्थ हैः ईश्वर के आगे नतमस्तक हो जाना। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मानो हर समय ईश्वर के सम्मुख उपस्थित रहते थे। आपने युद्ध–क्षेत्र में भी कभी नमाज नहीं छोड़ी।ईश्वर पर आपका अटूट विश्वास था। आपका कथन है कि अगर जूती का तसमा भी टूटे तो ईश्वर ही से मांगो। एक बार आपकी प्रिय सुपुत्राी हजरत फातिमा रजिष्यल्लाहु अन्हा घरेलू कामों की अधिकता के कारण आपकी सेवा में उपस्थित हुई और बहुत डरते–डरते एक सेविका के लिए प्रार्थना की, तो आपने फरमायाः''ऐ प्यारी बेटी! तू ईश्वर पर भरोसा रख और उसका हकष् अदा (स्वत्वपूर्ति) कर। अपने घर वालों की सेवा स्वयं कर। अगर तू किसी समय थकन अनुभव करे तो 'सुब्हान अल्लाह' (ईश्वर पवित्रा है) 33 बार, 'अल्हम्दुलिल्लाह' (सारी प्रशंसा ईश्वर के लिए है) 33 बार, 'अल्लाहु अक्बर' (ईश्वर ही सबसे बड़ा है) 34 बार पढ़ लिया कर, तेरी सारी थकन दूर हो जाया करेगी।''इसका नाम है सच्ची भक्ति! इसका नाम है सच्ची ईश्वर–उपासना! इसका नाम है ईश्वर–प्रेम! आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाया करते थे, ''मुसलमान की सबसे पहली निशानी यह है कि वह ईश्वर और किष्यामत के दिन के हिसाब– किताब से डरे।''

इतना आसां नहीं मुसलमां का मुसलमां होना

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

सहाबा–ए–किराम (रज़ि0) की मिसाली जमाअत दुनिया–ए–इन्सानियत की सबसे बेहतरीन जमाअत थी, खुदा की रसूल की मुहब्बत से सरशार, दावते दीन के जज़्बे से मामूर और अज़ीम मक़ासिद की हामिल, उनके सामने उमरा व सलातीन के दरबार, दुनिया की मुतमद्दिन तहज़ीबें और ज़ाहिरी उठना–बैठना और चलना–फिरना इस्लामी तरीक़े पर था और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के सिखाए हुए तरीक़े पर था। यही वजह है कि उनकी ज़िन्दगियां अपनों और ग़ैरों के लिए यकसां तौर पर जाज़िब नज़र और बाइसे रश्क थीं। उनकी नबी करीम (स0अ0व0) की ज़ात पर ग़ैर मामूली फ़ख़्र और आपकी सुन्नतों से हद दर्जा इश्क़ था। उन्हें इस्लामी तालीमात पर सौ फ़ीसद शरह सद्र था और इसीलिए एहसासे कमतरी उनको छूकर भी नहीं गुज़री थी। एक ज़िन्दा क़ौम के जीने का यह वह अन्सर था जिसने हर नशेब व फ़राज़ से गुज़रने पर आमादा कर दिया था, फिर उनके लिए राहे हक़ की मुश्किलात पर सब्र करना, दावत के मिशन में इस्तिक़ामत बरतना, मैदाने जंग में सीना सिपर होना, इस्लाम दुश्मनों की फ़ब्तियां बर्दाश्त करना या गुरबत व फ़ाक़ाकशी की ज़िन्दगी बसर करना बहुत ज़्यादा मामूली बात थी, क्योंकि उनका तसव्वुरे आख़िरत इन्तिहाई मज़बूत था और वहां की नेमतों के मुक़ाबले में दुनिया की हर चीज़ उनके लिए हैच थी।

मशहूर सहाबी–ए–रसूल हज़रत आमिर बिन फ़हीरा (रज़ि0) की शहादत का वाक़्या है, जब वह दुश्मनों के हाथों शहीद हुए तो आख़िरी वक़्त में उनकी ज़बान से एक अजीब जुम्ला निकला, जैसे ही उनको तीर लगा वह बोलेः ''रब्ब–ए–काबा की क़सम! मैं कामयाब हो गया।''

एक ऐसे वक़्त में जबकि इन्सान दुश्मनों के घेरे में हो और जान निकलने वाली हो, फिर भी ज़बान से ऐसे ख़ुदु एतमादी के अल्फ़ाज़ की अदायगी मामूली बात नहीं है। जब्बार बिन सलमा कहते हैं कि आमिर का यही वह आख़िरी जुम्ला है जो मेरे क़ुबूले इस्लाम का सबब बना। मैं हैरत में था कि कोई शख़्स ऐसे आख़िरी वक़्त में झूठ कैसे बोल सकता है, फिर अरबों के मिज़ाज में यूं भी झूठ बोलना शामिल नहीं है, लेकिन यह कैसी कामयाबी है, जिसका तज़किरा आमिर ने अपने आख़िरी वक़्त में किया। इसलिए उन्होंने तहक़ीक़ शुरू की तो पता चला कि उन्होंने शहादत का जाम नोश किया और उन्हें अपनी हुस्ने आक़िबत का यक़ीन था, इसलिए उन्होंने मौत को कामयाबी का नाम दिया था। जब्बार बिन सलमा को जब इस हक़ीक़ते हाल का इल्म हुआ तो उन्होंने फ़ौरन इस्लाम क़ुबूल कर लिया।

आमिर बिन फ़हीरा के वाक़्या–ए–शहादत और जब्बार बिन सलमा के क़ुबूले इस्लाम' इन दोनों ही वाक़्यात में उम्मते मुस्लिमा के लिए दर्से इबरत है, इससे पता चलता है कि दीने इस्लाम में फ़ितरी तौर पर कशिश मौजूद है कि ग़ैरों में एक तजस्सुस पैदा हो और वह यह गवाही देने पर मजबूर हो जाएं कि यह ऐसे मज़हब के नामलेवा हैं जो अपने उसूल से सौदा नहीं कर सकता, उनके नज़दीक दौलत, राहत, ताक़त, इज़्ज़त, शोहरत की अहमियत गर्द है, कोई चीज़ उनके आख़िरत के तसव्वुर को कमज़ोर नहीं कर सकती और कोई लालच उनके आहिनी अज़ाएम में दीवार नहीं बन सकता।

ग़ौर का मक़ाम है कि एक सहाबी–ए–रसूल की ज़िन्दगी ऐसी मुबारक और दाइयाना थी कि वह आख़िरी वक़्त में भी इस्लाम का पैग़ाम देते हुए दुनिया से रुख़्सत हुए यहां तक कि दीन के दुश्मन यह सोचने पर मजबूर हो गए कि यह वाक़ई किसी ऐसी चीज़ और ख़ज़ाने के मालिक हैं जो हमारी नज़रों से छिपा हुआ है, वरना मौत को कामयाबी का नाम न देते। इसी के मुक़ाबले में हम लोग हज़ारों बरस से ग़ैरों के साथ रह रहे हैं, मगर आज तक अपना कोई दाइयाना किरदार उनके सामने पेश करने से क़ासिर हैं, उनकी नज़रों में हम सिवाए चन्द मज़हबी रुसूमात की पाबन्दी के कोई अलग क़ौम नहीं हैं, यही वजह है कि हमारे लिए हर मुसीबत बुज़दिली और कोताह हिम्मती का सबब बनती है, जबकि सहाबा के लिए मुसीबतें तरक़्क़ी का ज़ीना साबित होती थीं, वाक़्या यह है कि इस्लाम चन्द रुसूमात का क़ायल नहीं है, बल्कि ज़रूरी है कि पूरी ज़िन्दगी उसके क़ालिब में ढाली जाए।

इज्तिहाद के मैदान मे जमूद व लापरवाही
मुसलमानों के ज़वाल की एक वजह

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

दौरे उरूज के बाद कई सदियों तक मुसलमान इल्म व तहक़ीक़ के मैदान में सुस्त ख़राम बल्कि गुमनाम रहे। इनकी तालीम व तदरीस का महवरे उलूम अवाएल तक ही महदूद रहा। तालीमी व तहक़ीक़ी इदारों में यह ज़हनियत काम करती रही कि असलाफ़ जो कारनामा अंजाम दे गए हैं वह इल्म व तहक़ीक़ का हरफ़े आख़िर है। अब इस पर कोई इज़ाफ़ा नहीं किया जा सकता है। बड़ी से बड़ी इल्मी व तहक़ीक़ी ख़िदमत बस यही मुमकिन थी कि असलाफ़ की लिखी हुई किताबों पर हाशियों के रद्दे चढ़ाए जाएं। मुहक़्क़िक़ीन व मुदर्रिसीन इसी मशग़ले को इल्मी मेराज समझते रहे। किसी नई तहक़ीक़, नई दरियाफ़्त, नई फ़िक्र का इल्म मुश्किल ही से उन सदियों में मिलता है।

दौलते उस्मानिया के आख़िरी दौर में यह दावा करना कि इज्तिहाद का दरवाज़ा खुला है एक बहुत बड़ा जुर्म और गुनाहे कबीरा ख़्याल किया जाता था। आख़िर में उम्मते मुस्लिमा को इज्तिहाद की बन्दिशों का सामना करना पड़ा लेकिन इस काम का नतीजा क्या निकला? जिन्दगी की तेज़ रफ़्तार गाड़ी चल रही थी और तक़लीद व जमूद का शिकार मुसलमान हर नई चीज़ को रद्द कर रहे थे। वह बहुत पीछे रह गए और मामला उनके हाथ से निकल गया। दुनिया की क़ौमें नए–नए ईजादात कर रहीं थीं, हर नई चीज़ को लब्बैक कह रही थीं। इसको इस्तेमाल में ला रही थीं। वह ज़िन्दगी के साथ क़दम से क़दम मिलाकर चल रही थीं, लेकिन मुसलमान अभी तक उसी जगह खड़े थे जहां उनके आबा व अजदाद सदियों पहले पहुंचे थे।

मशहूर तुर्क फ़ाज़िला ख़ालिदा अदीब ख़ानम कहती हैं: उस्मानियों ने उलूमे जदीदा की तहसील की तरफ़ कोई तवज्जो नहीं की बल्कि नए ख़्यालात को अपनी क़लमरो में दाख़िल ही नहीं होने दिया। जब तक मिल्लते इस्लामिया की तालीम की बाग़डोर उनके हाथ में थी, क्या मजाल कोई नई चीज़ क़रीब आने पाए। नतीजा यह हुआ कि उनके इल्म पर जुमूद तारी होकर रह गया। इधर दौरे इन्हितात में इनकी सियासी मसरूफ़ियतें इस क़द्र बढ़ गईं थीं कि मुशाहदा और तर्जबे के झमेले में पड़ने की इन्हें फ़ुर्सत ही नहीं रही।

मन्सबे क़यादत पर बाक़ी रहने के लिए एक बुनियादी सिफ़त ''क़ूव्वते इज्तिहाद'' भी है यानि वह सलाहियत जिसके ज़रिये ज़िन्दगी के मसाएल को हल करना आसान हो और इश्तबाह व तहीर के मौक़े पर उम्मत को भरपूर रहनुमाई मुमकिन हो। हालात के तक़ाज़ों से पूरी वाक़िफ़ियत हो, दरपेश चैलेंज्स के मुक़ाबले की तैयारी मुकम्मल हो, लोहे को काटने के लिए लोहा बल्कि फ़ौलाद हो, क़ायदीन के लिए ज़रूरी है कि वह रूहे इस्लाम और इस्लामी क़ानूनसाज़ी के उसूल से इतनी वाक़िफ़ियत और इस्तिम्बात की इतनी सलाहियत रखते हों जिसके ज़रिये उम्मत की मुश्किलों को हल कर सकें लेकिन बदक़िस्मती से आख़िरी दौर में मुसलमानों ने इसकी तरफ़ कोई तवज्जे ने दी। इज्तिहाद का दरवाज़ा इस शिद्दत से बन्द हुआ कि क़ुरआन और हदीस की ज़िन्दा तालीमात भी महज़ तबर्रुक का ज़रिया बन कर रह गयीं। इसीलिए मुस्लिम हुकूमतों को जब जंगों का सामना होता तो जंगी पॉलिसियों पर ग़ौर करने और नए आलात हरब व जदाल तैयार करने के बजाए ''ख़त्मे बुख़ारी'' की मजलिसों का एहतिमाम किया जाता।

यह हक़ीक़त है कि दवाई और तक़ाज़ों के बावजूद अगर इज्तिहाद के दरवाज़े बन्द कर दिये जाएं तो ना चाहकर भी दो में से एक चीज़ ज़रूर सामने आएगी, या तो ज़िन्दगी जमूद का शिकार होगी या नशोनुमा रुक जाएगी या वह उन मुकर्रर सांचों को तोड़कर आज़ाद हो जाएगी कि शरीअत के दायरे को फलांगकर इल्हाद की सरहद तक जा पहुंचे और यह दोनों चीज़ें एक के बाद दूसरी सामने आएंगी, पहले जमूद तारी हुआ, फिर उसके बाद शरीअत से बग़ावत का रुझान पैदा हुआ।

आप मुस्लिम दुनिया की बदक़िस्मती मुलाहिज़ा कीजिए कि दुनिया की सौ बड़ी यूनिवर्सिटयों की फ़ेहरिस्त में मुस्लिम दुनिया की एक भी यूनिवर्सिटी नहीं आती, सारी मुस्लिम दुनिया मिलकर जितने रिसर्च पेपर

तैयार करती है, वह अमरीका के शहर बोस्टन में होने वाली रिसर्च का आधा माना जाता है। पूरी मुस्लिम दुनिया के उमरा व हुक्मरा इलाज व मुआलजे के लिए यूरोप व अमरीका जाते हैं, यह अपनी ज़िन्दगी के आख़िरी दिन यहीं गुज़ारना चाहते हैं। हमने पिछले पांच सौ साल में दुनिया को कोई भी हथियार, कोई दवा, कोई फ़लसफ़ा, कोई अच्छी किताब, कोई अच्छा खेल और कोई अच्छा क़ानून नहीं दिया। हमने कुरआन मजीद की इशाअत के लिए काग़ज़, प्रिंटिंग मशीन और स्याही ही बना ली होती तो हमारी इज़्ज़त रह जाती। हम तो ख़ाना–ए–काबा के ग़िलाफ़ का कपड़ा भी इटली से तैयार कराते हैं। हरमैन–शरीफ़ैन के लिए साउंड सिस्टम भी यहूदियों से ख़रीदते हैं। हमारे लिए आबे ज़मज़म भी काफ़िरों की कम्पनियां निकालती हैं। हमारी तस्बीहात और जाए नमाज़ें भी चीन से आती हैं। हमारे एहराम और कफ़न भी जर्मन की मशीनों में तैयार होते हैं। हम मानें या न मानें दुनिया के डेढ़ अरब मुसलमान सारिफ़ से ज़्यादा अहमियत नहीं रखते। यूरोप नई–नई चीज़ें ईजाद करता है, तैयार करता है और मुस्लिम देशों तक पहुंचाता है, हम इस्तेमाल करते हैं और फिर उसके बनाने वाले को आंखें दिखाते हैं। आप यक़ीन कीजिए कि जिस साल आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड ने सऊदी अरब को भेड़ें देने से इनकार कर दिया उस साल मुसलमान हज के मौक़े पर सही से कुर्बानी नहीं कर सकेंगे और जिस दिन यूरोप व अमरीका ने मुस्लिम दुनिया को गाड़ियां, जहाज़ और कम्प्यूटर बेचना बन्द कर दिया हम उसी दिन घरों में बन्द होकर रह जाएंगे।

डॉक्टर अहमद शलबी लिखते हैं कि मुसलमानों के इल्मी व फ़िक्री जमूद के संगीन नताएज सामने आए। एक ऐसी नस्ल परवान चढ़ी जिसने यह समझ लिया कि फ़ुक़्हा में इज्तिहाद का फ़ुकदान दरअस्ल इस्लाम के जमूद पसंद मिज़ाज का नतीजा है और इस्लाम एक ऐसा जामिद मज़हब है जो बदलते हुए हालात की रहनुमाई और दुनिया को दरपेश नित नए चैलेंज के मुक़ाबले की तवानाई से महरूम है। तो दीन पर से न सिर्फ़ उनका एतमाद उठता गया बल्कि दीनदार लोग उनकी नज़रों में हक़ीर व बेहैसियत होते गए।

इसीलिए आलमे इस्लाम जब मग़्रिब के क़ब्ज़े में आया तो मुस्लिम नवजवानों के अन्दर एक क़िस्म की "एहसासे कमतरी" पैदा हो चुकी थी, ख़ासकर जुनूबी एशिया में जदीद तालीम याफ़्ता मुसलमानों की जो नस्ल तैयार हुई वह मग़्रिब से पूरी तरह मरऊब थी और कुछ ऐसा महसूस होता था कि वह अपने माज़ी पर शर्मिन्दा हैं और उन का यह अक़ीदा बन चुका था कि मग़्रिब का हर मामला उनसे बेहतर है।

इल्म व फ़िक्र के दौरे इन्हितात में मुसलमानों की क़यादत ऐसे हाथों में आयी जिनकी साख़्त व परदाख़्त मग़्रिबियत के सांचों में हुई थी, उन्होंने अपनी दानिस्त में मुसलमानों के ज़वाल की गुत्थी सुलझा ली और तेज़ आवाज़ में यह नारा लगाया कि इस क़ौम की ज़रूरत सिर्फ़ और सिर्फ़ "तालीम" है, अगर इस क़ौम के अफ़राद मग़्रिबी ज़बाने सीखकर अहले मग़्रिब की तरह इसमें महारत हासिल कर लें और उनके पेशकरदा जदीद उलूम से वाक़िफ़ हो जाएं तो क़ौम की तमाम मुश्किलें ख़ुद हल हो जाएं और ज़वाल व इन्हितात की सारी रुस्वाइयां दूर हो जाएं, इसी फ़िक्र व ख़्याल के तहत उन्होंने मग़्रिबी तर्ज़ पर स्कूल व कालिज क़ायम किये, जहां तर्ज़े तालीम व तदरीस और निसाबियात में वह पूरी तरह मग़्रिबी आक़ाओं मुक़ल्लिद थे, अलबत्ता मुसलमानों के दीनी जज़्बे की रिआयत करते हुए इसमें दीनियात के शोबे का इज़ाफ़ा भी किया और इसी जज़्बे की बिना पर उन कालिजो और यूनिवर्सिटयों को "इस्लामिया कालिज" और "मुस्लिम यूनिवर्सिटी" का नाम भी दिया।

यहां इस हक़ीक़त को समझना ज़रूरी है कि हर इल्म की एक ख़ास रूह और उसका एक ख़ास ज़मीर होता है। इस्लाम ने जिन उलूम की बुनियाद डाली और अपने क़ालिब में ढाला उन सबमें ईमान, तक़वा और ख़शीयते इलाही की रूह पूरे तौर पर मौजूद थी। यहां तक कि मुसलमानों ने जिन उलूम को संवारा और इस्लाह की वह भी दीनी रूह से ख़ाली नहीं थे, लेकिन इस्लाम के बिलमुक़ाबिल यूरोप ने जिन उलूम को मुदव्वन किया उनमें इनकारे ख़ुदा, माद्दा परस्ती, महसूसात पर ईमान और ग़ैर महसूसात से बेएतनाई पूरे तौर पर मौजूद है। इसीलिए इस मग़्रिबी निज़ामे तालीम पर मुसलमानों की बेपनाह दौलत भी ख़र्च हुई, होनहार बच्चे और बेहतरीन जवान भी उन तालीमगाहों के लिए वक़्फ़ हुए, लेकिन इन तमाम जद्दोजहद का नतीजा क्या निकला? एक आम फ़िक्री बेराहरवी, अफ़कार व ख़्यायलात में तज़ाद व नाहमवारी और दीन में शक व तज़बज़ुब और अख़लाक़ व अदब से बेज़ारी, यह वह असरात हैं जो नई तालीमयाफ़्ता जमाअत में ज़ाहिर हुए, इस तरह मुस्लिम क़ौम के ज़वाल की गुत्थी सुलझती और उलझती रही और सारी तवानाइयां उसके सिरे की तलाश में ज़ाया होती रहीं।

सुन्नत–ए–रसूल (स0अ0व0) की अहमियत

"जब क़यामत के क़रीब हालात ख़राब हो जाएं, समाज में बिगाड़ हो जाए, बेदीनी फैल जाए, कुफ़्र उमड़ने लगे, दुश्मनों की ताक़त हमारे ख़िलाफ़ इस्तेमाल होने लगें तो अपनी फ़िक्र करो, निजी सुधार की ओर ध्यान दो। आज परिस्थिति यह है कि जहां बैठ जाओ, जहां चार आदमी एकत्र हो जाएं, हालात की ख़राबी का शिकवा ज़बान पर होगा, चर्चा कर रहे होंगे कि फ़लां ने यह कर दिया, फ़लां ने यह कर दिया...लेकिन क्या जब हम यह चर्चा करते हैं तो खुद भी कभी यह सोचा कि हमारे अन्दर क्या ख़राबी है, हमारे अन्दर कौन सी कमी है जिसको दूर करना चाहिए। अपने सुधार की चिन्ता ख़त्म हो रही है, जिसका परिणाम यह है कि हर आदमी दूसरों के ऐब ढूंढता है, दूसरों की चिन्ता करता है, लेकिन अपने सुधार की चिन्ता पहले करें। आप लोग जानते हैं कि सुधार (इस्लाह) में सभी वर्ग आते हैं, इसमें इबादतें भी दाख़िल हैं, मामलात (लेन–देन) भी, अख़लाक़ (व्यवहार) भी तथा सामाजिकता भी, लेकिन कौन है जो इन चारों वर्गों में सुधार की चिन्ता कर रहा हो? कोई इबादत को दीन समझ बैठा है, कोई मामलों से ग़ाफ़िल है। आप बाहर जाकर देखें तो रिश्वतख़ोरी का बाज़ार गर्म है। हलाल व हराम की फ़िक्र मिट गयी है। अल्लाह का हक़ और बन्दों का हक़ रौंदा जा रहा है, इसकी फ़िक्र लोगों में जगाने की ज़रूरत है।"

दूसरी चीज़ अल्लाह की तरफ़ रुजूअ (आकर्षित होना) है। यह शिकवे तो हर एक करता है कि बड़े बुरे हालात आ गए हैं, लेकिन इस शिकवे के साथ कभी इस तरह की दुआ की जैसे मुसीबत में पड़े होने वाला करता है? इस समय सामूहिक रूप से हमारी स्थिति यह है कि हम एक नाव पर सवार हैं और वह नाव लहरों में घिरी हुई है। चारों ओर से पहाड़ों की भांति लहरें आ रही हैं तो ऐसी हालत में हमें ख़तरा है कि नाव डूब जाएगी। उस समय हम किस इख़्लास व लिल्लाहियत (शुद्धता) के साथ हम उसको पुकारेंगे। हर इन्सान जिसके दिल में ज़र्रा बराबर भी ईमान हो, वह अल्लाह ही को पूरे दिल से पुकारेगा, तो क्या इतनी ही बेचैनी के साथ कभी हमने अल्लाह तआला से दुआ की है और इस तरह से अल्लाह तआला की तरफ़ मुड़ते हैं, तो ज़्यादातर लोगों का जवाब न में होगा। अगर हम अपने गिरेबान में झांककर देखें तो पता चलेगा कि हम कितने पानी में हैं। बस यह पैग़ाम भी पहुंचाने और फैलाने की ज़रूरत है कि अल्लाह की तरफ़ रुजूअ का एहतिमाम (व्यवस्था) की जाए।

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती तक़ी उस्मानी साहब

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 10 | *October 2021* | Volume: 13

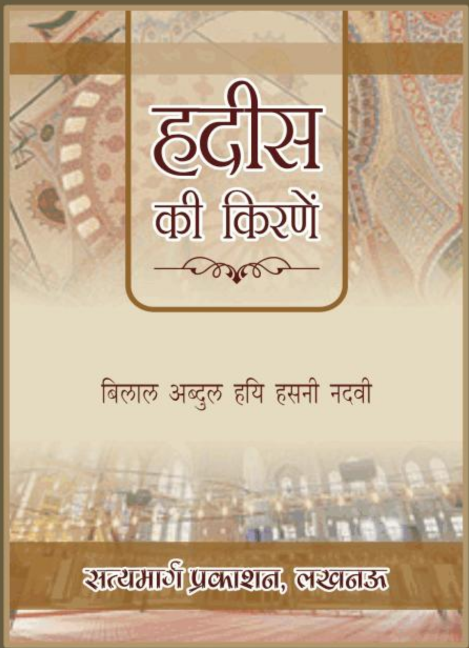

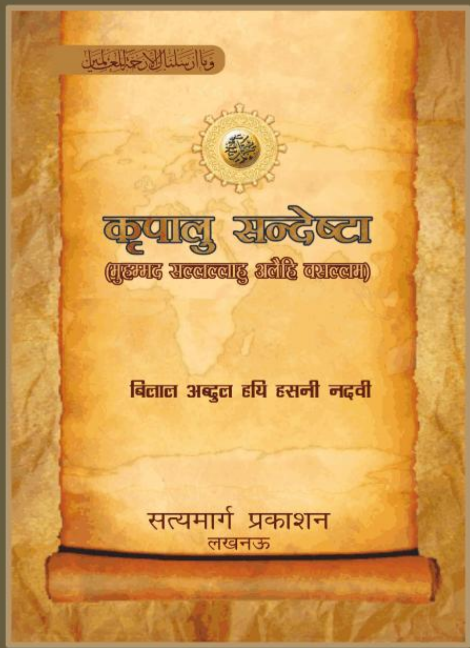

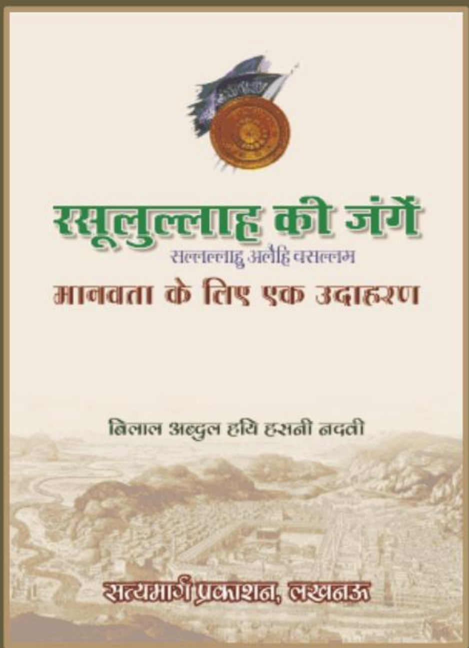

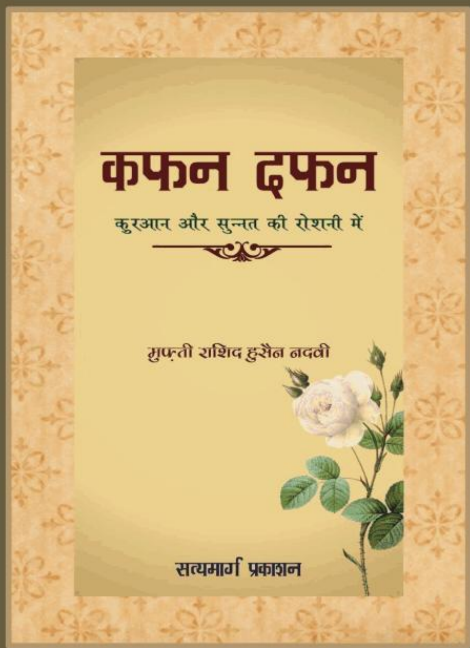

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.